दृष्टि The Vision

एडिटोरियल

(संग्रह)

अक्तूबर भाग-1

2021

दृष्टि, 641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
फोन: 8750187501
ई-मेल: online@groupdrishti.com

अनुक्रम

संवैधानिक/प्रशासनिक घटनाक्रम **5**

- ग्रामीण ऋण जाल 5
- आपदा प्रबंधन में पंचायती राज संस्थानों की भूमिका 6
- भारत का अर्द्ध-संघीय लोकतंत्र 9

आर्थिक घटनाक्रम **12**

- जीआई पारितंत्र: लाभ और चुनौतियाँ 12
- सार्वजनिक ऋण की संवहनीयता 14
- भारतीय कृषि क्षेत्र में डिजिटल क्रांति 16

अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रम **19**

- बाह्य अंतरिक्ष की भू-रणनीति 19

दृष्टि The Vision

नोट :

➢ भारत और वर्तमान वैश्विक व्यवस्था 21

➢ ‘हिंद-प्रशांत क्षेत्र’ में यूरोपीय संघ की भूमिका 24

पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण 27

➢ भारतीय कृषि क्षेत्र और पर्यावरण 27

सामाजिक न्याय 29

➢ वैश्विक खाद्य प्रणाली: दिशा और दशा 29

दृष्टि The Vision

नोट :

नोट :

संवैधानिक/प्रशासनिक घटनाक्रम

ग्रामीण ऋण जाल

अखिल भारतीय ऋण और निवेश सर्वेक्षण (All-India Debt and Investment Surveys- AIDIS) भारत में ग्रामीण ऋण बाज़ार के संबंध में सर्वप्रमुख राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिनिधिक डेटा स्रोतों में से एक है जो राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (NSO) द्वारा आयोजित कराया जाता है।

हाल ही में प्रकाशित, AIDIS रिपोर्ट के अनुसार ग्रामीण ऋण बाज़ार में गैर-संस्थागत स्रोतों की मज़बूत उपस्थिति है, इस तथ्य के बावजूद कि उनसे उधार लेने में उच्च लागत शामिल होती है। किफायती/सस्ते ऋण तक अपर्याप्त पहुँच ग्रामीण संकट के मूल में है।

AIDIS रिपोर्ट के निष्कर्ष:

- रिपोर्ट के अनुसार, ग्रामीण भारत में प्रति परिवार औसत ऋण 59,748 रुपए है, जो शहरी भारत में प्रति परिवार औसत ऋण का लगभग आधा है।
- ऋण तक पहुँच का एक प्रमुख संकेतक ऋणग्रस्तता की घटना (Incidence of Indebtedness- IOI) है, जो बकाया ऋण रखने वाले परिवारों का अनुपात बताता है।
- नवीनतम AIDIS रिपोर्ट के अनुसार, ग्रामीण भारत में IOI 35% है - 17.8 प्रतिशत ग्रामीण परिवार, संस्थागत ऋण एजेंसियों की, 10.2 प्रतिशत गैर-संस्थागत एजेंसियों की और 7% दोनों के ऋणी हैं।
- कुल बकाया ऋण में संस्थागत ऋण एजेंसियों से लिये गए ऋण की हिस्सेदारी शहरी भारत में 87% की तुलना में ग्रामीण भारत में 66% है।

ग्रामीण ऋण जाल के कारण:

- घरेलू उद्देश्यों के लिये ऋण का उपयोग: यह समझने के लिये कि सामाजिक-आर्थिक असमानता घरेलू ऋणग्रस्तता को कैसे आकार देती है, ऋण लेने के उद्देश्यों की जाँच की जानी चाहिये।
  - ग्रामीण भारत में मुख्य रूप से कृषि व्यवसाय और आवास के लिये संस्थागत ऋण लिया जाता है।
  - गैर-संस्थागत स्रोतों से लिये गए ऋण का एक बड़ा भाग अन्य घरेलू खर्चों के लिये उपयोग किया जाता है।
  - आँकड़ों के अनुसारी, संपन्न परिवारों की औपचारिक-क्षेत्र ऋण तक अधिक बेहतर पहुँच है और वे इसका उपयोग अधिक आय-सृजन उद्देश्यों के लिये करते हैं।
    - संपत्ति के स्वामित्व के मामले में शीर्ष 10% ग्रामीण परिवार अपने संस्थागत ऋण का लगभग दो-तिहाई और गैर-संस्थागत ऋण का 40% कृषि/गैर-कृषि व्यवसाय पर खर्च करते हैं, जबकि निचले स्तर के 10% अपने कुल ऋण का आधा घरेलू खर्च पर व्यय करते हैं।
- सामाजिक पहचानों का कारक: सामाजिक पहचानों की परस्पर क्रिया से ऋण तक पहुँच जटिल बन जाती है। ग्रामीण क्षेत्रों में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के परिवारों की औसत संपत्ति स्वामित्व उच्च जाति के परिवारों की तुलना में एक तिहाई है।
- किफायती/सस्ते ऋण तक अपर्याप्त पहुँच ग्रामीण संकट के मूल में है। विपणन योग्य संपार्श्विक की कमी, उपभोग उद्देश्यों के लिये ऋण की माँग और सूचनात्मक बाधाएँ ग्रामीण आबादी के एक बड़े हिस्से को संस्थागत वित्त से बहिर्वेशित (Excluded) रखने के प्राथमिक कारण रहे हैं।
  - ग्रामीण निर्धनों की उपभोग आवश्यकताओं को समायोजित करने और ग्रामीण परिवारों को संस्थागत वित्त नेटवर्क के अंतर्गत लाने हेतु संपार्श्विक के विकल्पों की खोज के लिये ऋण नीति को संशोधित किये जाने की आवश्यकता है।

नोट :

- ग्रामीण गरीबों के पास संपार्श्विक (Collateral) के लिये संपत्ति की कमी: संस्थागत ऋण तक पहुँच काफी हद तक परिवारों की संपत्ति को संपार्श्विक के रूप में प्रस्तुत करने की क्षमता से निर्धारित होती है।
  - रिपोर्ट के अनुसार संपत्ति स्वामित्व रखने वाले शीर्ष 10% परिवारों ने अपने कुल ऋण का 80% संस्थागत स्रोतों से उधार लिया, जबकि निचले स्तर के 50% परिवारों ने अपने कुल ऋण का लगभग 53% गैर-संस्थागत स्रोतों से उधार लिया।
- ऋण माफी की नीति: ऋण माफी योजनाएँ ऋण अनुशासन को बाधित करती हैं क्योंकि कृषि ऋण माफी एक अस्थायी समाधान पेश करती है और भविष्य में एक नैतिक खतरा साबित हो सकती है।
  - इसका कारण यह है कि जो किसान अपने ऋण का भुगतान कर सकते हैं, वे भी किसी ऋण माफी की अपेक्षा में इसके भुगतान के प्रति अनिच्छुक बने रहेंगे।

आगे की राह:

- संस्थागत ऋण की पहुँच में सुधार के उपाय करना:
  - भारत सरकार को राज्य सरकारों को समयबद्ध तरीके से डिज़िटलीकरण प्रक्रिया और भूमि अभिलेखों के अद्यतनीकरण को पूरा करने के लिये प्रेरित करना चाहिये ।
  - राज्य सरकारों को बैंकों को डिज़िटल भूमि रिकॉर्ड तक पहुँच प्रदान करनी चाहिये ताकि वे भूमि के मालिकाना हक को सत्यापित कर सकें और ऑनलाइन भार सर्जित कर सकें।
- संबद्ध गतिविधियों के लिये ऋण प्रवाह बढ़ाना: सरकार को संबद्ध गतिविधियों के लिये कार्यशील पूँजी और सावधि ऋण के लिये अलग-अलग लक्ष्य निर्धारित करने चाहिये।
- भूमि चकबंदी: राज्य सरकारों को भूमि चकबंदी (land Consolidation) के लिये जागरूकता अभियान को बढ़ावा देना चाहिये और इसका संचालन करना चाहिये ताकि किसान पैमाने की अर्थव्यवस्था/आकारिक मितव्ययिता प्राप्त कर सकें तथा दीर्घकालिक निवेश करने के लिये प्रोत्साहन पा सकें।
- संपार्श्विक के रूप में सोने (Gold) पर कृषि ऋण: वर्तमान में ऐसे ऋणों को बैंकों के कोर बैंकिंग समाधान (CBS) प्लेटफॉर्म में अलग से चिह्नित नहीं किया जाता है ।
- कृषि ऋण माफी: भारत सरकार और राज्य सरकारों को कृषि नीतियों और उनके कार्यान्वयन की समग्र समीक्षा करनी चाहिये साथ ही कृषि इनपुट तथा ऋण के संबंध में वर्तमान सब्सिडी नीतियों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन इस तरह से करना चाहिये की वह एक संवहनीय रूप में कृषि की समग्र व्यवहार्यता में सुधार ला सके।
- कृषि क्षेत्र के लिये ऋण गारंटी योजना: भारत में उधारकर्त्ताओं के डिफ़ॉल्ट जोखिम को कवर करने के लिये बैंकों के पास कोई गारंटी योजना उपलब्ध नहीं है।
  - केंद्र सरकार को राज्य सरकारों के साथ साझेदारी के साथ MSMEs क्षेत्र में लागू की गई क्रेडिट गारंटी योजनाओं की तर्ज पर कृषि क्षेत्र के लिये भी एक 'क्रेडिट गारंटी फंड' स्थापित करना चाहिये।
- वित्तीय समावेशन प्राप्त करना: कृषि परिवारों के वित्तीय बहिर्वेशन की सीमा को कम करने के लिये प्रौद्योगिकी संचालित समाधानों के माध्यम से संस्थागत ऋण वितरण में सुधार हेतु आक्रामक प्रयास करने की आवश्यकता है।
  - बैंकों को एग्री-टेक कंपनियों/स्टार्ट-अप्स के साथ सहयोग की तलाश करनी चाहिये ताकि किसानों को एकीकृत, समयबद्ध और कुशल तरीके से ऋण उपलब्ध कराया जा सके।

आपदा प्रबंधन में पंचायती राज संस्थानों की भूमिका

संदर्भ

73वें संविधान संशोधन के माध्यम से देश के आर्थिक विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करने में स्थानीय निकायों को सशक्त करने हेतु उन्हें एक मज़बूत आधार प्रदान किया गया था। इस संशोधन के माध्यम से स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं के रूप में पंचायतों की परिकल्पना की गई है।

नोट :

इस संदर्भ में आपदा जोखिम न्यूनीकरण और आपदा पश्चात् प्रबंधन दोनों ही विषयों में 'पंचायती राज संस्थाओं' (PRIs) की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

दुर्भाग्य से, ये संस्थान अभी तक पूर्व-तैयारी चरण में या आपदा के दौरान और आपदा के बाद के अभियानों के दौरान प्रमुख भूमिका निभा सकने हेतु पूर्ण सशक्त नहीं बनाए गए हैं।

भारत को, समग्र तौर पर विभिन्न आपदाओं से मुकाबला करने हेतु अपनी तैयारियों को अपनी मूल प्रणाली में एकीकृत करना चाहिये।

पंचायती राज संस्थान और आपदा प्रबंधन

- भारत में पंचायती राज संस्था: देश भर में मौजूद 2,60,512 पंचायती राज संस्थाओं की व्यवस्था भारतीय लोकतंत्र की रीढ़ के रूप में कार्य करती है।
  - यह एक स्थानीय स्वशासन प्रणाली है, जो देश भर में लगभग 31 लाख सदस्यों का प्रतिनिधित्व करती है।
- कोविड-19 महामारी के प्रति पंचायती राज संस्थाओं की प्रतिक्रिया: महामारी के चरम महीनों के बीच, पंचायती राज संस्थाओं ने स्थानीय स्तर पर आवश्यक नेतृत्व प्रदान कर उल्लेखनीय भूमिका का निर्वाह किया था।
- नियामक और कल्याण कार्यों का निष्पादन: पंचायती राज संस्थाओं ने 'कंटेंमेंट जोन' स्थापित किये, परिवहन की व्यवस्था की, लोगों के क्वारंटाइन के लिये इमारतों की पहचान की और प्रवासियों के लिये भोजन की व्यवस्था की।
  - इसके अलावा, मनरेगा (MGNREGA) और राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (National Rural Livelihood Mission) जैसी कल्याणकारी योजनाओं के प्रभावी कार्यान्वयन ने संवेदनशील समूहों की आजीविका सुनिश्चित करते हुए पुनरुद्धार की गति को तेज़ करने में योगदान किया है।
- प्रभावी सहभागिता: महामारी के दौरान, ग्राम सभाओं ने 'कोविड-19' मानदंडों का पालन कराने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।
  - इसके साथ ही, समितियों के माध्यम से 'आशा' (ASHA) और आँगनवाड़ी कार्यकर्त्ताओं जैसे अग्रिम पंक्ति के कार्यकर्त्ताओं के साथ संलग्नता ने स्थानीय स्तर पर महामारी से निपटने में मदद की।
- स्थानीय निगरानी निकायों का निर्माण: पंचायती राज संस्थाओं ने क्वारंटाइन केंद्रों की कड़ी निगरानी करने और परिवारों में कोविड लक्षणों की पहचान के गाँव के बुजुर्गों, युवाओं और स्वयं सहायता समूहों (SHGs) को संलग्न करते हुए समुदाय-आधारित निगरानी प्रणाली का निर्माण किया।

भारत में आपदा प्रबंधन:

- आपदाओं के प्रति भेद्यता: भारत विश्व का 10वाँ सर्वाधिक आपदा-प्रवण देश है, जिसके 28 में से 27 राज्य और सभी सात केंद्रशासित प्रदेश सर्वाधिक भेद्य हैं।
- अक्षम मानक संचालन प्रक्रियाएँ: देश भर के कई स्थानों पर 'मानक संचालन प्रक्रियाएँ' (SOPs) लगभग अस्तित्त्व में ही नहीं हैं, और जहाँ यह मौजूद भी है, वहाँ संबंधित प्राधिकार इससे अपरिचित हैं।
- समन्वय की कमी: राज्य विभिन्न सरकारी विभागों और अन्य हितधारकों के बीच अपर्याप्त समन्वय की समस्या से भी ग्रस्त हैं।
  - भारतीय आपदा प्रबंधन प्रणाली केंद्र/राज्य/ज़िला स्तर पर संस्थागत ढाँचे के अभाव से भी ग्रस्त है।
- कमज़ोर चेतावनी और राहत प्रणाली: भारत में एक सशक्त पूर्व-चेतावनी प्रणाली का अभाव है।
  - राहत एजेंसियों की सुस्त प्रतिक्रिया, प्रशिक्षित/समर्पित खोज एवं बचाव दल की कमी और बदतर समुदाय सशक्तीकरण अन्य कुछ प्रमुख चुनौतियाँ हैं।

आपदा प्रबंधन में पंचायती राज संस्थाओं का महत्त्व

- ज़मीनी स्तर पर आपदाओं से निपटना: पंचायतों को शक्ति और उत्तरदायित्वों के हस्तांतरण से प्राकृतिक आपदाओं के मामले में ज़मीनी स्तर पर प्रत्यास्थी और प्रतिबद्ध प्रतिक्रिया पाने में सहायता मिलेगी।
  - राज्य सरकार के साथ तालमेल में कार्यरत प्रभावी और सुदृढ़ पंचायती राज संस्थान पूर्व-चेतावनी प्रणाली के माध्यम से आपदा से निपटने में मदद करेंगे।

- बेहतर राहत कार्य सुनिश्चित करना: चूँकि स्थानीय निकाय आबादी के अधिक निकट होते हैं, वे राहत कार्य को आगे बढ़ाने की बेहतर स्थिति में हैं, साथ ही वे ही स्थानीय लोगों की आवश्यकताओं से अधिक परिचित होते हैं।
- यह प्रत्येक आपदा की स्थिति में कार्यान्वयन और धन के उपयोग के मामले में पूर्ण पारदर्शिता सुनिश्चित करेगा।
- उन पर दिन-प्रतिदिन की नागरिक सेवाओं के परिचालन, प्रभावित लोगों को आश्रय और चिकित्सा सहायता प्रदान करने जैसे विषयों में भी भरोसा किया जा सकता है।

- जागरूकता का प्रसार करना और सहयोग प्राप्त करना: स्थानीय स्वशासन संस्थानों का लोगों के साथ ज़मीनी स्तर का संपर्क होता है और वे किसी संकट से मुकाबले के लिये लोगों के बीच जागरूकता के प्रसार और उनकी भागीदारी सुनिश्चित करने में प्रभावी रूप से मदद कर सकते हैं।
  - वे बचाव और राहत कार्यों में गैर-सरकारी संगठनों और अन्य एजेंसियों की भागीदारी के लिये भी आदर्श माध्यम का निर्माण करते हैं।

पंचायती राज संस्थाओं के समक्ष विद्यमान समस्याएँ

- सांसदों और विधायकों का हस्तक्षेप: पंचायतों के कामकाज में क्षेत्रीय सांसदों और विधायकों का हस्तक्षेप उनके प्रदर्शन पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।
- धन की अनुपलब्धता: पंचायतों को पर्याप्त धन प्रदान नहीं किया जाता है और उनसे अधिक महत्त्व राज्य-नियंत्रित सरकारी विभागों को दिया जाता है जो पंचायतों के अधिकार-क्षेत्र में आने वाले कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में भी अपना नियंत्रण बनाए हुए हैं।
- अपूर्ण स्वायत्तता: ज़िला प्रशासन और राज्य सरकारों द्वारा अधिरोपित विभिन्न बाधाओं के कारण प्राय: पंचायतों के पास स्वतंत्र रूप से कार्य कर सकने के लिये प्रणालियों, संसाधनों और क्षमताओं का अभाव होता है।
  - संविधान द्वारा परिकल्पित 'स्थानीय स्वशासन के संस्थान' बनने के बजाय पंचायतें मुख्य रूप से राज्य और केंद्र सरकारों द्वारा लिये गए निर्णयों के स्थानीय 'कार्यान्वयनकर्त्ता' भर होने तक सीमित रह गई हैं।
- पंचायतों के अधिकार-क्षेत्रों के संबंध में अस्पष्टता: यद्यपि पंचायती राज ग्राम, प्रखंड और ज़िला स्तर की त्रिस्तरीय एकीकृत व्यवस्था है, लेकिन उनके क्षेत्राधिकारों और संलग्नताओं के संबंध में व्याप्त अस्पष्टताओं के परिणामस्वरूप वे काफी हद तक अप्रभावी ही रही हैं।
  - राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 में भी पंचायतों की शक्तियों और उत्तरदायित्वों को पर्याप्त रूप से परिभाषित नहीं किया गया है और इसे संबंधित राज्य सरकारों द्वारा निर्धारित किये जाने के लिये छोड़ दिया गया है।

आगे की राह

- आपदा प्रबंधन कार्यक्रमों के लिये कानूनी समर्थन: पंचायत राज अधिनियमों में आपदा प्रबंधन के विषय को शामिल करना और आपदा योजना एवं व्यय को पंचायती राज विकास योजनाओं एवं स्थानीय स्तर की समितियों का अंग बनाना अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।
  - यह संसाधनों के नागरिक-केंद्रित मानचित्रण और नियोजन को सुनिश्चित करेगा।
- संसाधन की उपलब्धता और आत्मनिर्भरता: स्थानीय शासन, स्थानीय नेतृत्व और स्थानीय समुदाय को जब सशक्त किया जाता है तो वे किसी भी आपदा पर त्वरित और प्रभावी ढंग से प्रतिक्रिया देने में सक्षम होते हैं।
  - स्थानीय निकायों को सूचना और मार्गदर्शन की आवश्यकता है, साथ ही ऊपर से प्राप्त निर्देशों की प्रतीक्षा किये बिना आत्मविश्वास से कार्य कर सकने के लिये उनके पास संसाधनों, क्षमताओं और प्रणालियों का होना भी आवश्यक है।
- आपदा प्रबंधन प्रतिमान में परिवर्तन: आपदा प्रबंधन के जोखिम शमन सह राहत-केंद्रित दृष्टिकोण को बदलते हुए इसे सामाजिक न्याय के साथ आर्थिक विकास की एक एकीकृत योजना में परिवर्तित करने की तत्काल आवश्यकता है।
  - पूर्व-चेतावनी प्रणाली, पूर्व-तैयारी, निवारक उपाय और लोगों के बीच जागरूकता भी आपदा प्रबंधन के लिये उतना ही महत्त्वपूर्ण है. जितना कि रिकवरी और पुनर्वास योजना तथा अन्य राहत उपाय।
- सामूहिक भागीदारी: समुदाय के लिये नियमित, स्थान-विशिष्ट आपदा-प्रबंधन कार्यक्रम आयोजित करना और सर्वोत्तम अभ्यासों की साझेदारी के लिये मंचों का निर्माण व्यक्तिगत एवं संस्थागत क्षमताओं को मज़बूत करेगा।
  - व्यक्तिगत सदस्यों को भूमिकाएँ सौंपना और उन्हें आवश्यक कौशल प्रदान करना ऐसे कार्यक्रमों को अधिक सार्थक बना सकता है।
- लोगों से वित्तीय योगदान प्राप्त करना: सभी ग्राम पंचायतों में सामुदायिक आपदा कोष की स्थापना के माध्यम से समुदाय से वित्तीय योगदान की प्राप्ति को भी प्रोत्साहित किया जाना चाहिये।
  - आपदा के प्रति रोधी क्षमता को सामुदायिक संस्कृति का अंतर्निहित अंग बनाना अब पहले से कहीं अधिक अनिवार्य हो गया है।

भारत का अर्द्ध-संघीय लोकतंत्र

संदर्भ

भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में संसदीय व्यवधान (Parliamentary Disruption) एक सामान्य घटना है। बीते कुछ दिनों में ऐसे व्यवधानों के बीच ही संसद में बिना किसी विचार-विमर्श के बड़ी संख्या में ऐसे विधेयक (जैसे तीन कृषि कानून विधेयक) पारित किये गए है, जो देश के संघीय ढाँचे को प्रभावित करने की क्षमता रखते हैं ।

इसने भारत के संघीय लोकतंत्र में व्याप्त संरचनात्मक खामियों के संबंध में कई विषयों की ओर ध्यान आकर्षित किया है जिन पर गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है।

भारतीय संघवाद (Indian Federalism)

- संक्षिप्त तौर पर संघवाद एक द्वैध सरकार प्रणाली है, जिसमें एक केंद्र और कई राज्य शामिल होते हैं।
- भारतीय संघवाद की अनूठी विशेषताएँ:
  - एकल संविधान: भारत में केवल एक ही संविधान को अंगीकार किया गया है। यह समग्र रूप से संघ और राज्यों, दोनों पर लागू होता है; जबकि एक 'वास्तविक संघ' (True Federation) में, संघ और राज्यों के लिये अलग-अलग संविधान होते हैं।
  - शक्ति का विभाजन: किसी वास्तविक संघ में दो सरकारों के बीच शक्ति समान रूप से विभाजित होती है।
    - लेकिन भारत में, केंद्र सरकार को राज्य सरकारों की तुलना में अधिक शक्तियाँ दी गई हैं और उन्हें अधिक मज़बूत बनाया गया है (अनुसूची 7 की संघ सूची में राज्य सूची की तुलना में अधिक और महत्त्वपूर्ण विषय रखे गए हैं)।
  - संविधान अत्यधिक कठोर नहीं है: भारत के संविधान में भारतीय संसद द्वारा समय की आवश्यकता के अनुरूप संशोधन किया जा सकता है।
    - कई मामलों में संविधान के संशोधन के लिये संसद को राज्य विधानसभाओं के अनुमोदन की आवश्यकता भी नहीं होती है (अनुच्छेद-3 मौजूदा राज्यों के क्षेत्रों, सीमाओं या नामों के परिवर्तन की अनुमति प्रदान करता है)।
    - हालाँकि, राज्यों के कार्यों और अधिकारों को प्रभावित करने वाले संविधान संशोधनों और कानूनों पर आधे राज्यों की सहमति आवश्यक है (संविधान का अनुच्छेद 368)।
  - एकीकृत न्यायपालिका: भारत में एकीकृत न्यायिक प्रणाली स्थापित की गई है। उच्च न्यायालय, जो किसी राज्य के शीर्ष न्यायालय होते हैं, पदानुक्रम में भारत के सर्वोच्च न्यायालय के अंतर्गत रखे गए हैं।
  - एकल नागरिकता: भारत में संघ और राज्यों के लिये अलग-अलग नागरिकता नहीं प्रदान की गई है (संविधान के भाग II के तहत एकल नागरिकता का प्रावधान)।
    - सभी भारतीय नागरिक देश के नागरिक हैं। यह संयुक्त राज्य अमेरिका से विपरीत है, जहाँ दोहरी नागरिकता का प्रबंध है: एक, संघीय और दूसरा, राज्य की नागरिकता।
- भारतीय संविधान की प्रकृति
  - संघीय सिद्धांतकार 'के.सी. व्हेयर' (K.C. Wheare) ने भारतीय संविधान को अपनी प्रकृति में अर्द्ध-संघीय (Quasi-Federal) माना है।
  - 'एस.आर. बोम्मई बनाम भारत संघ' वाद (1994) में सर्वोच्च न्यायालय के नौ न्यायाधीशों की पीठ ने संघवाद को 'संविधान की मूल संरचना' (Basic Structure of the Constitution) का अंग माना था।
  - 'सत पाल बनाम पंजाब राज्य एवं अन्य' (1969) मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने भारतीय संविधान को संघीय या एकात्मक की तुलना में अर्द्ध-संघीय अधिक माना था।

अर्द्ध-संघीय प्रणाली के लाभ

- राष्ट्रीय एकीकरण: भारतीय संविधान सभा ने एक वास्तविक संघ का निर्माण नहीं करने का निर्णय तत्कालीन अनिश्चित परिदृश्यों को देखते हुए लिया था।

- धर्म के आधार पर पाकिस्तान की मांग के साथ अन्य भारतीय राज्यों में भी अलग राष्ट्र राज्यों के सृजन की कुछ मांगें उठ रही थीं। परिणामस्वरूप, संविधान में अनुच्छेद-356 जैसे विभिन्न प्रावधान जोड़े गए। एकात्मक विशेषताओं वाली एक संघीय संरचना ने इस तरह के परिदृश्यों से निपटने हेतु एक अवसर प्रदान किया।

- सहयोग और समन्वय: एक अर्द्ध-संघीय संरचना ही केंद्र को 'पल्स पोलियो कार्यक्रम' जैसे राष्ट्रीय स्तर के कार्यक्रमों का समन्वय करने का अवसर देती है।
  - हाल ही में कोविड-19 के दौरान विभिन्न राज्यों को उनकी आवश्यकता के अनुसार ऑक्सीजन का आवंटन एक केंद्रीय प्राधिकार के कारण ही संभव हो सका।
- एकल बाज़ार अर्थव्यवस्था: अर्द्ध-संघीय ढाँचा भारत को विश्व के लिये एक 'एकल बाज़ार' के रूप में विकसित होने का अवसर देता है। हाल ही में लाई गई वस्तु एवं सेवा कर (GST) व्यवस्था ने भारत को एक एकल बाज़ार के रूप में उभरने की अनुमति दी है।
  - इसके अलावा, पूरे भारत में एक ही आयकर व्यवस्था लागू है और राज्यों के पास अलग आयकर लागू करने की शक्ति नहीं है। इस प्रकार, भारतीय नागरिकों की दोहरे कराधान से रक्षा की गई है।
- प्रक्रियात्मक सुगमता: भारतीय संसदीय प्रणाली अपने द्विसदनीय विधानमंडल के साथ संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे वास्तविक संघ में विधि पारित करने की प्रक्रिया की तुलना में अधिक प्रक्रियात्मक सुगमता प्रदान करती है।
  - द्विसदनीय विधानमंडल की व्यवस्था उच्च सदन में राज्यों का उचित प्रतिनिधित्व भी सुनिश्चित करती है।
- अंतर्राज्यीय विवादों का समाधान: भारत का अर्द्ध-संघीय ढाँचा केंद्र को अंतर्राज्यीय विवादों में मध्यस्थ के रूप में अपनी भूमिका निभाने का अवसर देता है। उदाहरण के लिये सीमा विवाद और नदी जल विवाद।
  - संविधान का अनुच्छेद 262: अंतर्राज्यीय नदियों या नदी घाटियों के जल से संबंधित विवादों का अधिनिर्णयन

अर्द्ध-संघीय व्यवस्था की चुनौतियाँ

- केंद्र द्वारा शक्ति का दुरुपयोग: संविधान के संघीय प्रावधानों में केवल राज्यों की सहमति से ही संशोधन किया जा सकता है। संविधान की अनुसूची-7 में केंद्र और राज्य के लिये अलग-अलग सूची का प्रावधान किया गया है।
  - हालाँकि, केंद्र नियमित रूप से राज्य के विषयों पर कानून बनाकर इस प्रावधान का उल्लंघन करता रहा है। हाल के तीन कृषि कानून भी इसकी पुष्टि करते हैं।
- राज्यपाल का पद: भारतीय संविधान के अनुच्छेद-154 के अनुसार राज्य की सभी कार्यकारी शक्तियाँ राज्यपाल में निहित हैं।
  - इस प्रावधान का तात्पर्य यह है कि राज्यपाल राज्य के मुख्यमंत्री के साथ ही राज्य के महाधिवक्ता और राज्य चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति की शक्ति रखता है। केंद्र में सत्तासीन राजनीतिक पार्टी द्वारा अपनी राज्य इकाई या गठबंधन साझीदार किसी क्षेत्रीय पार्टी के पक्ष में बार-बार राज्यपाल की शक्तियों का दुरुपयोग किया जाता है।
  - राज्यपाल की सर्वोपरि कार्यकारी शक्ति यह है कि वह किसी राज्य में संवैधानिक आपातकाल लगाने की अनुशंसा कर सकता है।
- क्षेत्रवाद: क्षेत्रवाद स्वयं को भाषा, संस्कृति आदि के आधार पर स्वायत्तता की मांगों के माध्यम से स्थापित करता है।
  - इस प्रकार, राष्ट्र को उग्रवाद के रूप में आंतरिक सुरक्षा की चुनौती का सामना करना पड़ता है, जो कि भारतीय संघ की मूल धारणा पर आघात का कारण बनता है।

आगे की राह

- संस्थागत और राजनीतिक स्तर पर सुधार भारत में संघवाद की जड़ों को गहरा कर सकता है।
- केंद्र के हितों के लिये राज्यों के अधिकार को महत्त्वहीन करने में राज्यपाल की विवादास्पद भूमिका की भी समीक्षा की जानी चाहिये।

- विवादास्पद नीतिगत मुद्दों पर केंद्र और राज्यों के बीच राजनीतिक सद्भावना विकसित करने हेतु अंतर्राज्यीय परिषद के संस्थागत तंत्र का उचित उपयोग सुनिश्चित किया जाना चाहिये।
- केंद्र के हिस्से को कम किये बिना राज्यों की राजकोषीय क्षमता के क्रमिक विस्तार की कानूनी गारंटी दी जानी चाहिये।

निष्कर्ष

संविधान की प्रारूप समिति के अध्यक्ष डॉ. आंबेडकर ने उपयुक्त दृष्टिकोण को आगे बढ़ाते हुए था कि, ''हमारा संविधान समय और परिस्थितियों की आवश्यकताओं के अनुसार एकात्मक और संघीय दोनों होगा।''

उनके इस दृष्टिकोण के अनुरूप, भारतीय संघवाद को एक अलग प्रकार के संघवाद या स्वयं में अनूठे संघवाद (Federalism Sui Generis) के रूप में देखना ही अधिक उपयुक्त होगा।

दृष्टि The Vision

आर्थिक घटनाक्रम

जीआई पारितंत्र: लाभ और चुनौतियाँ

संदर्भ

भारत का वैश्विक 'ब्रांड रिकॉल' (Brand Recall) और बहु-सांस्कृतिक लोकाचार, प्रामाणिकता एवं जातीय विविधता संबंधी विशेषताएँ देश की अर्थव्यवस्था के लिये महत्त्वपूर्ण उत्प्रेरक या 'टर्बोचार्जर' बन सकती हैं। कई जानकार 'भौगोलिक संकेत' (Geographical Indications) या GI टैग्स को उस चैनल के रूप में देखते हैं, जिसके माध्यम से इन विशेषताओं को और अधिक महत्त्वपूर्ण बनाया जा सकता है।

वर्तमान में, जलवायु परिवर्तन और स्थिरता पर बल देने के साथ ये उत्पाद महत्त्वपूर्ण राजस्व सृजक भी हो सकते हैं। भारत के सुदृढ़ ई-कॉमर्स क्षेत्र में एक आधुनिक वितरण प्रणाली मौजूद है, जो अपने प्रारंभिक स्तर पर मौजूद 'जीआई उद्योग' को राष्ट्रीय तथा विश्व स्तर पर आगे बढ़ाने में मदद कर सकती है।

भौगोलिक संकेतक (GI) के संभावित लाभ

- स्थानीय समुदायों को लाभ: जीआई संरक्षण के माध्यम से स्थानीय समुदायों को व्यापक सकारात्मक लाभ प्रदान किये जा सकते हैं। यह विशेष रूप से जैव विविधता, स्थानीय अनुभवों/सूचनाओं और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण को प्रोत्साहित करता है तथा इसके माध्यम से भारत भी अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार कर सकता है।
- आर्थिक और 'सॉफ्ट' पॉवर: एक सुदृढ़ जीआई पारितंत्र से कई लाभ प्राप्त होते हैं, जो प्रत्यक्ष तौर पर आर्थिक एवं 'सॉफ्ट' पॉवर के स्रोत हो सकते हैं।
  - यह मुख्यत: भारत की तीन जटिल समस्याओं—प्रतिभाशाली लोगों के लिये कम वेतन, श्रमबल में निम्न महिला भागीदारी और शहरी प्रवास- को हल कर सकता है।
- यह 'गिग वर्कर्स' (Gig Workers) के साथ प्रतिभा को उद्यमिता में रूपांतरित करेगा और एक 'पैशन इकॉनमी' (Passion Economy)- यानी व्यक्तियों के कौशल के मुद्रीकरण- और अपने व्यवसायों को तीव्रता से बढ़ाने के नए अवसरों का निर्माण करेगा।
  - यह किसी नियोक्ता के अतिरिक्त अन्य स्रोत से नियमित आय अर्जित करने की फ्रीलांस कार्य से संबंधित बाधाओं को भी दूर करता है।
- रोज़गार-जनसंख्या अनुपात में वृद्धि: जीआई की श्रम-गहन प्रकृति भारत में रोज़गार-जनसंख्या अनुपात को बढ़ावा देने के लिये सर्वश्रेष्ठ समाधान प्रदान करती है, जो वर्तमान में 55% के वैश्विक औसत की तुलना में महज 43% है।
  - घरेलू स्तर पर किये गए शिल्प कार्य का मुद्रीकरण भारत में निम्न महिला श्रमबल भागीदारी दर में सुधार करेगा, जो वर्ष 2019 में मात्र 21% (वैश्विक औसत 47% से काफी कम) था।
- 'रिवर्स अर्बन माइग्रेशन': जीआई की अति-स्थानीयकृत प्रकृति शहरी प्रवास की दिशा को पलटने और भारत के प्राचीन शिल्प, संस्कृति एवं खाद्य के संरक्षण के लिये समाधान प्रस्तुत करती है।
  - इससे MSMEs क्षेत्र का भी कायाकल्प होगा जो भारत के सकल घरेलू उत्पाद में 31% और निर्यात में 45% की हिस्सेदारी रखता है।
  - अनुमानित 55.80 मिलियन MSMEs लगभग 130 मिलियन लोगों को रोज़गार प्रदान करते हैं; इनमें से 14% उद्यम महिलाओं के नेतृत्त्व में संचालित होते हैं और 59.5% ग्रामीण क्षेत्र में कार्यरत हैं।
  - 'जीआई पर्यटन' भी इस दिशा में काफी महत्त्वपूर्ण हो सकता है, जो कि मूलत: एक सुदृढ़ जीआई पारितंत्र का सह-उत्पाद है।

जीआई और डिजिटल कॉमर्स

- 'अमेज़न' के 'लोकल-टू-ग्लोबल' कार्यक्रम ने भारतीय उत्पादकों और उनके उत्पादों, जैसे 'डेल्टा लेदर कॉरपोरेशन' के चमड़े और 'एसवीए ऑर्गेनिक्स' के जैविक उत्पादों को 200 से अधिक देशों में 18 वैश्विक बाज़ारों तक पहुँचाया है, जिसके परिणामस्वरूप उत्पादों की मांग और कंपनी के आकार में 300 गुना तक वृद्धि हुई है।
  - वर्ष 2019 से वर्ष 2021 के बीच 'अमेज़न' ने 2 बिलियन डॉलर से अधिक मूल्य के ऐसे 'मेड इन इंडिया' उत्पादों का निर्यात किया है।
- प्रारंभिक चरण में जीआई उत्पादों को सरकारों के समर्थन की आवश्यकता है। गौरतलब है कि वर्तमान में यूरोपीय संघ के पास 87 बिलियन अमेरिकी डॉलर मूल्य की जीआई अर्थव्यवस्था मौजूद है। चीन ने भी जीआई क्षेत्र में काफी बेहतर प्रदर्शन किया है, जहाँ ग्रामीण क्षेत्रों में ई-कॉमर्स को सुदृढ़ किया गया है और अल्प विकसित क्षेत्रों में कृषि विशिष्ट उत्पाद ब्रांडों को सक्रिय रूप से बढ़ावा दिया गया है।
- विभिन्न अध्ययनों से पता चलता है कि जीआई के तहत उत्पादों के पेटेंट और कॉपीराइट संरक्षण के परिणामस्वरूप उच्च आर्थिक लाभ प्राप्त होता है, साथ ही इससे गुणवत्तापूर्ण उत्पादन को बढ़ावा मिलता है।

कमियाँ और चुनौतियाँ

- भारत में जीआई क्षेत्र की क्षमता को अभी तक साकार नहीं किया जा सका है, क्योंकि अब तक के प्रयास मुख्य रूप से जीआई दाखिल करने के पहले चरण पर ही केंद्रित हैं।
- जीआई आवेदन दाखिल करना एक बेहद जटिल कार्य है, जिसमें क्षेत्र के साथ उत्पाद की संबद्धता के बारे में ऐतिहासिक साक्ष्य का दस्तावेज़ीकरण करना शामिल होता है, साथ ही यह भी आवश्यक है कि आवेदन किसी संघ या व्यक्तियों के समूह द्वारा दाखिल किया जाए।
- देश में उत्पादकों, उपभोक्ताओं और नीति निर्माताओं के बीच जीआई के बारे में सीमित जागरूकता के कारण अधिकांश पंजीकृत उत्पादों के मामले में उत्पादकों को लाभ पहुँचाने के लिये विपणन/ब्रांडिंग साधन के रूप में जीआई प्रमाणीकरण का उपयोग कर सकने के संदर्भ में बेहद कम प्रयास किये गए हैं।

आगे की राह

- क्षमता निर्माण: चूँकि जीआई व्यवसाय सूक्ष्म (Micro) प्रकृति के होते हैं, ऐसे में इनके लिये घरेलू एवं अंतर्राष्ट्रीय दोनों ही बाज़ारों में क्षमता निर्माण, औपचारिक या आसान ऋण तक पहुँच, अनुसंधान एवं विकास, उत्पाद नवाचार और प्रतिस्पर्द्धात्मकता की चुनौतियों का समाधान किया जाना आवश्यक है।
  - औपचारिक ऋण तक MSME की पहुँच के लिये आधारभूत कार्य पहले ही नए 'एकाउंट एग्रीगेटर' डेटा-शेयरिंग ढाँचे के साथ किया जा चुका है।
- डिजिटल प्लेटफॉर्म की ओर बढ़ने की आवश्यकता: वर्तमान में संपूर्ण प्रणाली को नियंत्रित करने वाले मध्यस्थों का मुद्दा भी काफी चुनौतीपूर्ण है। डिजिटल प्लेटफॉर्म की ओर आगे बढ़ने के साथ इन 'गेटकीपर्स' या 'मंडी एजेंटों' का वितरण मार्जिन भी प्रतिस्पर्द्धी होना चाहिये, ताकि वे समान व्यवसायों या उत्पाद लाइनों में शामिल होकर प्रतिकारी या काउंटरवेलिंग एजेंट के रूप में कार्य न करें, क्योंकि यह फिर जीआई उत्पादों से संबंधित आय को कम कर देगा।
  - जैसा कि नए कृषि कानूनों के अनुभव से देखा जा सकता है कि यह केंद्र और राज्य सरकारों के लिये एक कठिन कार्य होगा; उन्हें बहुत से मौजूदा संपर्कों (Linkages) को तोड़े बिना ट्रांज़िशन सुनिश्चित करना चाहिये।
- स्थानीय जीआई सहकारी निकाय: स्थानीय जीआई सहकारी निकायों या संघों की स्थापना की जानी चाहिये, जिन्हें 'वाणिज्य एवं उद्योग मंत्रालय' के 'उद्योग संवर्द्धन और आंतरिक व्यापार विभाग' (DPIIT) के तत्वावधान में एक जीआई बोर्ड द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर प्रबंधित किया जा सकता है और इन जीआई सहकारी निकायों को इस नए क्षेत्र के विकास का कार्य सौंपा जाना चाहिये।
- डिजिटल साक्षरता का प्रसार: जीआई उत्पादकों के लिये 'डिजिटल साक्षरता' एक आवश्यक कौशल है। यह गैर-सरकारी संगठनों और DPIIT जैसे हितधारकों के लिये एक प्राथमिकता एजेंडा होना चाहिये।
  - यह भारत के लिये ऑटोमेशन, टेक्नोलॉजी और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का उपयोग करते हुए भविष्य को बेहतर करने तथा देश के प्रतिभाशाली स्थानीय कार्यबल को बढ़ाने एवं उन्हें बेहतर बना सकने का एक अवसर है।

नोट :

निष्कर्ष

भारतीय जीआई अर्थव्यवस्था (GI Economy) देश के लिये एक महत्त्वपूर्ण प्लेटफॉर्म हो सकती है, जिसके माध्यम से एक सुदृढ़ डिजिटल प्रणाली के बल पर नैतिक पूँजीवाद, सामाजिक उद्यमिता, गैर-शहरीकरण और महिलाओं को कार्यबल में शामिल करने संबंधी मॉडल को विश्व के समक्ष प्रस्तुत किया जा सकता है। यही वास्तविक 'मेड इन इंडिया' होगा।

सार्वजनिक ऋण की संवहनीयता

संदर्भ

वैश्विक वित्तीय सेवा कंपनी 'मॉर्गन स्टेनली' ने अपनी एक हालिया रिपोर्ट में अनुमान लगाया है कि भारत को वर्ष 2022 के आरंभ में 'वैश्विक बॉण्ड सूचकांकों' में शामिल कर लिया जाएगा और इसके परिणामस्वरूप अगले दशक के दौरान भारतीय संप्रभु बॉण्ड में 170-250 बिलियन अमेरिकी डॉलर का निवेश प्रवाह होगा।

वैश्विक बॉण्ड सूचकांक (Global Bond Indices)

इसमें ऐसे उभरते हुए ऋण बाज़ार शामिल हैं, जो विकासशील देशों की सरकारों द्वारा जारी स्थानीय मुद्रा बॉण्डों की निगरानी करते हैं। भारत अधिकांश 'बेंचमार्क इक्विटी सूचकांकों' (Benchmark Equity Indices) में उपस्थित रहा है, लेकिन बॉण्ड सूचकांक बाज़ार में वह अब तक अनुपस्थित रहा है।

अभी हाल ही में 'भारतीय बॉण्ड बाज़ार' विभिन्न कारणों से चर्चा में रहा है। इनमें सार्वजनिक ऋण की संवहनीयता (Sustainability of Public Debt) नीति निर्माताओं के दृष्टिकोण से प्रमुख विषय है।

सार्वजनिक ऋण/उधारी के उद्देश्य

- आय एवं राजस्व: सार्वजनिक ऋण का लक्ष्य आम तौर पर प्रस्तावित व्यय और अपेक्षित राजस्व के बीच असंतुलन के कारण उत्पन्न अंतर को कवर करना होता है।
  - प्राय: प्रशासनिक व्यय में वृद्धि के कारण अथवा बाढ़, अकाल, भूकंप और संचारी रोगों जैसी अप्रत्याशित समस्याओं के कारण सरकार की आय कम हो जाती है, क्योंकि उन्हें इन समस्याओं को दूर करने के लिये अत्यधिक व्यय करना पड़ता है।
- मंदी के समय में उपयोगी: मंदी का आशय उस स्थिति से है, जब लागत कम हो जाती है और उद्योगों पर पैसा खर्च करने अथवा निवेश के लिये लोगों की क्षमता कम हो जाती है, साथ ही भविष्य में लाभ मिलने की कोई संभावना भी नहीं होती।
- मुद्रास्फीति पर अंकुश लगाने के लिये: मुद्रास्फीति का अर्थ बढ़ी हुई लागत की स्थिति है। ऐसी स्थिति में प्राय: सरकार ऋण लेकर बड़ी मात्रा में लोगों की कार्यशक्ति अथवा उनकी खर्च करने की शक्ति को सीमित कर सकती है।
- विकास योजनाओं के वित्तपोषण के लिये: एक विकासशील अर्थव्यवस्था में सदैव कमी की स्थिति बनी रहती है। साथ ही इस प्रकार की अर्थव्यवस्थाओं में सरकार भारी कराधान का आश्रय भी नहीं ले सकती। लेकिन देश से गरीबी हटाने के लिये विकास योजनाओं को आगे बढ़ाना अनिवार्य और महत्त्वपूर्ण है।
  - ऐसी स्थिति में सार्वजनिक ऋण ही एकमात्र उपाय होता है। इसलिये सरकार वित्त जुटाने के लिये देश के अंदर से या विदेशी सरकारों से या आम लोगों से ऋण लेती है।
- शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार: सरकार निर्माण निर्माण गतिविधियों और शिक्षा एवं स्वास्थ्य जैसी सेवाओं के विस्तार के लिये भी ऋण लेती है।
- सार्वजनिक निर्णय को अनुकूल बनाने के लिये: जब देश के नागरिक कर भुगतान में सक्षम नहीं होते, तब भी सरकार को ऋण लेना पड़ता है। कभी-कभी तो लोगों में कर भुगतान की क्षमता होने के बावजूद सरकार लोकलुभावन नीति पर अमल करते हुए कभी भी कर नहीं बढ़ाती, जिसके परिणामस्वरूप उसे ऋण की आवश्यकता होती है।

बढ़ता सार्वजनिक ऋण

- भारतीय रिज़र्व बैंक के आँकड़ों के अनुसार, भारत का सार्वजनिक ऋण (केंद्र और राज्य सरकारों की संयुक्त देनदारियाँ) और सकल घरेलू उत्पाद (GDP) का अनुपात, वर्ष 2020 में बढ़कर 100.86 प्रतिशत के रिकॉर्ड उच्च स्तर पर पहुँच गया है, जो कि वर्ष 2014 में 76.86 प्रतिशत पर था।
- वर्तमान में भारत विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में ब्राज़ील एवं अर्जेंटीना के बाद सबसे अधिक ऋणग्रस्त देश है। यहाँ तक कि दक्षिण एशिया में भी भूटान और श्रीलंका के बाद भारत ही सबसे बड़ा कर्जदार देश है। गौरतलब है कि ब्रुनेई, संयुक्त अरब अमीरात और रूस में ऋण-जीडीपी अनुपात क्रमश: 2.46 प्रतिशत, 19.35 प्रतिशत और 19.48 प्रतिशत ही है।

उच्च सार्वजनिक ऋण के कारण

- बैंक पुनर्पूंजीकरण: वर्ष 2017-18 में सार्वजानिक बैंकों के पुनर्पूंजीकरण के कारण मात्रा की दृष्टि से और जीडीपी के प्रतिशत के रूप में केंद्र सरकार के कुल ऋण मंथ महत्त्वपूर्ण वृद्धि हुई है।
    - वर्ष 2017-18 में सरकारी स्वामित्व वाले बैंकों के वित्तपोषण के लिये 80,000 करोड़ रुपए के 'पुनर्पूंजीकरण बॉण्ड' का प्रयोग किया गया था।
- 'उदय' बॉण्ड (UDAY bonds): 'उज्ज्वल डिस्कॉम एश्योरेंस योजना' (Ujwal Discom Assurance Yojana-UDAY) से संबंधित बॉण्ड जारी होने के बाद वर्ष 2015-16 और वर्ष 2016-17 के दौरान राज्यों की देनदारी में बढ़ोतरी हुई है।
- राष्ट्रीय आय में करों की लघु हिस्सेदारी: भारत की स्वतंत्रता के बाद से राष्ट्रीय आय में चार गुना वृद्धि हुई है।
    - भारत में वर्ष 2021 में कर-जीडीपी अनुपात लगभग 10.2% है।
    - कर आय का अधिकांश भाग अप्रत्यक्ष करों से प्राप्त होता है।
- असंतुलित कर प्रणाली: भारतीय कर प्रणाली में कई त्रुटियाँ विद्यमान हैं। भारत में कर चोरी की समस्या काफी गंभीर है, क्योंकि देश की कर प्रणाली त्रुटिपूर्ण है।
- सार्वजनिक आय का दुरूपयोग: सरकारी व्यय का एक बड़ा भाग उन सार्वजनिक विभागों पर खर्च होता है, जहाँ भ्रष्टाचार, घूस और लालफीताशाही का माहौल है। इसके परिणामस्वरूप उत्पादन में कमी आ रही है।

बढ़ते सार्वजनिक ऋण का प्रभाव

- यह सर्वविदित है कि अत्यधिक सार्वजनिक ऋण, ब्याज दरों में उच्च 'रिस्क प्रीमियम की ओर ले जाता है, जिसके परिणामस्वरूप निजी निवेश में कमी के साथ ही दीर्घावधि में जीडीपी संकुचन की स्थिति बनती है।
- हालाँकि, सार्वजनिक ऋण में वृद्धि से अल्पावधि में कुल माँग और उत्पादन को प्रोत्साहन मिलता है, लेकिन यदि ऋण-जीडीपी अनुपात 90% से अधिक हो जाता है तो दीर्घावधि में आर्थिक वृद्धि नकारात्मक हो जाएगी।

आगे की राह

- घाटे में चल रहे सार्वजनिक उपक्रमों का निजीकरण: सरकार घाटे में चल रहे एयर इंडिया जैसे सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के निजीकरण पर विचार कर सकती है।
    - इसके अलावा, किसी सार्वजनिक उपक्रम के निजीकरण में 'न्यूनतम सरकार, अधिकतम शासन' (Minimum Government and Maximum Governance) के सिद्धांत को अपनाया जा सकता है।
- विवेकपूर्ण रुख: 'राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंधन' (FRBM) अधिनियम, 2003 के अनुसार, राजकोषीय समेकन प्राप्त करना और पारदर्शी ढंग से कार्यान्वित विवेकपूर्ण ऋण प्रबंधन और मौद्रिक नीति के प्रभावी कार्यान्वयन के माध्यम से दीर्घावधिक आर्थिक स्थिरता प्राप्त करना मुख्यत: सरकार का दायित्व है।
    - इसके अनुरूप, भारतीय रिज़र्व बैंक छत्तीसगढ़, गोवा, मणिपुर आदि राज्यों को नकदी और ऋण प्रबंधन के विवेकपूर्ण उपायों के बारे में संवेदनशील बना रहा है।

नोट :

- PFMS का लाभ उठाना: केंद्र सरकार अपने विभिन्न मंत्रालयों के माध्यम से लगभग 3 लाख करोड़ रुपए के वार्षिक परिव्यय के साथ एक हज़ार से अधिक समाज कल्याण योजनाओं का कार्यान्वयन कर रही है।
  - बेहतर पारदर्शिता और जवाबदेही को बनाए रखते हुए, राजकोषीय घाटे के बेहतर प्रबंधन के एक अंग के रूप में, धन के हस्तांतरण और उपयोग पर समयबद्ध, समेकित और बारीक डेटा के माध्यम से 'सार्वजनिक वित्तीय प्रबंधन प्रणाली' (PFMS) का अधिकतम लाभ उठाया जाना चाहिये।
- सामाजिक योजनाओं में पीपीपी मॉडल: सरकार 'दीन दयाल उपाध्याय ग्रामीण कौशल योजना' (DDU-GKY) जैसी सामाजिक योजनाओं में 'सार्वजनिक निजी भागीदारी' (PPP) मॉडल के बारे में विचार कर सकती है।
- कर व्यवस्था का सामंजस्य: हालाँकि, वस्तु एवं सेवा कर (GST) ने लगभग सभी अप्रत्यक्ष करों को शामिल कर लिया है, यह अभी भी अल्कोहल, पेट्रोलियम उत्पादों, बिजली आदि पर लागू नहीं है।
  - इस प्रकार, कर-जीडीपी अनुपात में सुधार की दृष्टि से राष्ट्रीय सर्वसम्मति की प्राप्ति हेतु जीएसटी को सामंजित करने और इसका विस्तार अन्य क्षेत्रों में भी करने की आवश्यकता है।
  - इसके अलावा, सरकार को उच्च सार्वजनिक ऋण को स्थानांतरण हेतु वित्तपोषण के अतिरिक्त स्रोतों के लिये एक निवेशक-अनुकूल वातावरण का भी निर्माण करना चाहिये।
- नवीकरणीय ऊर्जा पर बल: भारत कच्चे तेल की अपनी घरेलू आवश्यकता का लगभग 80% आयात करता है। भारत वर्ष 2025 तक 5 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर की अर्थव्यवस्था बन सकता है, यदि वह जीवाश्म ईंधन पर अपनी निर्भरता को कम करते हुए नवीकरणीय ऊर्जा पर अधिक ज़ोर दे, जिससे विदेशी मुद्रा की बचत होगी।
  - इसके अतिरिक्त, सरकार को निम्न लागत, जोखिम शमन और बाज़ार विकास जैसे सिद्धांतों का पालन कर सार्वजनिक ऋण प्रबंधन की दक्षता में वृद्धि करनी चाहिये।

भारतीय कृषि क्षेत्र में डिजिटल क्रांति

संदर्भ

डिजिटल प्रौद्योगिकियाँ, अर्थव्यवस्था और समाज के सभी क्षेत्रों को असंख्य रूप से प्रभावित कर रही हैं और इसमें लगातार बदलाव कर रही हैं। संचार, बैंकिंग, भुगतान प्रणाली, यात्रा, ऊर्जा, स्वास्थ्य सेवा, कराधान और शासन व्यवस्था को डिजिटल समाधानों के उपयोग से पर्याप्त लाभ प्राप्त हुआ है। कृषि क्षेत्र में व्याप्त चुनौतियों को अवसरों में बदलने के लिये कृषि और संबद्ध क्षेत्रों में भी 'डिजिटल समाधानों' की मांग की जा रही है।

हाल ही में 'कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय' (MoA&FW) द्वारा 'इंडिया डिजिटल इकोसिस्टम ऑफ एग्रीकल्चर' (India Digital Ecosystem of Agriculture- IDEA) पर एक परामर्श पत्र जारी किया गया है। यह कृषि क्षेत्र में एक डिजिटल क्रांति का प्रस्ताव करता है।

IDEA की अवधारणा

- 'इंडिया डिजिटल इकोसिस्टम ऑफ एग्रीकल्चर' की अवधारणा किसान एवं किसानों की आजीविका में सुधार पर लक्षित है, जिसे मुख्य तौर पर 'कृषि एवं खाद्य प्रणालियों' के लिये 'एग्री-टेक' नवाचार एवं कृषि उद्योग पारितंत्र के एकीकरण के माध्यम से किया जाएगा।
- IDEA के सिद्धांत स्पष्ट तौर पर व्यवसायों और किसानों के लिये 'डेटा की स्वतंत्रता' की बात करते हैं।
- एग्री-टेक उद्योगों और स्टार्ट-अप द्वारा प्रदत्त मूल्यवर्द्धित नवाचार सेवाएँ IDEA की संरचना का अभिन्न अंग हैं।

IDEA का उद्देश्य

- सही समय पर सही सूचना तक पहुँच एवं नवाचार सेवाओं के माध्यम से किसानों को उच्च आय और बेहतर लाभप्रदता प्राप्त करने में सक्षम बनाना।
- केंद्र एवं राज्य सरकारों के साथ ही निजी क्षेत्र और किसान उत्पादक संगठनों (FPOs) की नीतियों, कार्यक्रमों और योजनाओं के बेहतर नियोजन और क्रियान्वयन को सक्षम बनाना।
- सूचनाओं तक आसान पहुँच प्रदान कर भूमि, जल, बीज, उर्वरक, कीटनाशक और कृषि मशीनीकरण सहित विभिन्न संसाधनों के उपयोग में वृद्धि करना।
- डिजिटल कृषि और 'परिशुद्ध कृषि' (Precision Agriculture) के सभी क्षेत्रों में क्षमता निर्माण करना।
- उच्च गुणवत्तापूर्ण डेटा तक पहुँच के माध्यम से कृषि में अनुसंधान एवं विकास (R&D) और नवाचारों को बढ़ावा देना।
- राज्यों एवं केंद्रशासित प्रदेशों के साथ सहयोग करते हुए सहकारी संघवाद के सर्वोत्तम सिद्धांतों को अंगीकार करना।
- 'डिजिटल शक्ति' को साकार करने के लिये 'सार्वजनिक-निजी भागीदारी' (PPP) मॉडल का निर्माण करना और उसका लाभ उठाना।

प्रौद्योगिकियों को अपनाने संबंधी समस्याएँ

- डेटा के दुरुपयोग की संभावना: 'आधार नंबर' पर आधारित विशिष्ट किसान आईडी कार्ड के निर्माण में निहित नैतिक मुद्दों और डेटा के दुरुपयोग की संभावना के कारण 'आईटी उद्योग' द्वारा IDEA के प्रस्ताव का विरोध किया जा रहा है।
- 'डिजिटल व्यवधान' की चुनौतियाँ: डिजिटल पारितंत्र किसानों की आजीविका में सुधार हेतु मुख्यत: 'डिजिटल समाधानों/व्यवधानों' पर निर्भर करता है। हालाँकि, इस तरह के समाधान लाए जाने से पूर्व यह अध्ययन किया जाना आवश्यक है कि किसान इन नए उभरते कारोबारी परिदृश्यों से कितना लाभ उठा सकने में सक्षम होंगे।
    - इस संदर्भ में केंद्र सरकार ने तैयार किये जा रहे किसान डेटाबेस के महत्त्व पर ज़ोर दिया जा रहा है और इस दिशा में राज्यों से भी सहयोग मांगा गया है।
- जागरूकता की कमी: अधिकांश छोटे और सीमांत किसान प्रौद्योगिकी से अधिक परिचय या इसके प्रति अनुकूल नहीं होते हैं। अधिकांश किसान क्षमता निर्माण के दृष्टिकोण से पर्याप्त रूप से शिक्षित नहीं हैं और इस प्रकार के महत्वाकांक्षी विकास लक्ष्यों में इन किसानों की अनदेखी कर दी जाती है।
    - हालाँकि कृषि क्षेत्र में अधिकाधिक निवेश से किसानों को लाभ हो सकता है, लेकिन IDEA की अवधारणा में यह स्पष्टता मौजूद नहीं है कि प्रौद्योगिकीय सुधार भारतीय कृषि की सभी समस्याओं को किस प्रकार दूर कर पाएगा।
- सुधारों के विरुद्ध किसानों की प्रतिक्रिया: किसान सुधारों को हमेशा ही सकारात्मक तरीके से नहीं लेते हैं। इस संबंध में सरकार को किसानों और किसान संगठनों को विश्वास में लेने की आवश्यकता होगी।

आगे की राह

इस तथ्य पर सहमत होते हुए भी कि कृषि क्षेत्र में एक डेटा क्रांति अपरिहार्य है, इसकी सामाजिक-राजनीतिक जटिलताओं को देखते हुए हम किसानों की आजीविका में सुधार के लिये केवल प्रौद्योगिकी सुधार और कृषि-व्यवसाय निवेश पर ही भरोसा नहीं कर सकते।

- किसानों का क्षमता निर्माण: भारत में किसानों की क्षमता में सुधार के लिये महत्त्वपूर्ण प्रयास किये जाने की आवश्यकता है। ऐसा कम-से-कम तब तक किया जाना आवश्यक है, जब तक कि शिक्षित युवा किसान मौजूदा अल्प-शिक्षित छोटे और मध्यम किसानों की जगह नहीं ले लेते।
    - यह क्षमता निर्माण एक मिश्रित दृष्टिकोण अपनाकर किया जा सकता है— यानी प्रमुख रूप से व्यक्तिगत किसानों की क्षमताओं का निर्माण कर अथवा किसान उत्पादक संगठनों एवं अन्य किसान संघों के माध्यम से समर्थन प्रणालियाँ स्थापित कर नई स्थिति का सामना करना जहाँ किसानों के लिये तकनीकी सहायता उपलब्ध होगी।

नोट :

- देश के कृषि क्षेत्र के व्यापक आकार को देखते हुए यह कोई आसान कार्य नहीं होगा और इसके लिये व्यापक निवेश के साथ देश भर में क्रियान्वित एक अलग कार्यक्रम की आवश्यकता होगी।

- विश्व बैंक रिपोर्ट की अनुशंसाओं को अपनाया जाना:
  - 'डिजिटल क्रांति' और इससे सृजित डेटा, एक ऐसे कृषि एवं खाद्य प्रणाली के निर्माण के लिये महत्त्वपूर्ण है, जो कुशल, पर्यावरणीय रूप से संवहनीय, न्यायसंगत और विश्व के 570 मिलियन खेतों को 8 बिलियन उपभोक्ताओं के साथ संबद्ध करने में सक्षम हो।
  - वांछित डिजिटल रूपांतरण के लिये विश्व बैंक ने 7 रणनीतियों का सुझाव दिया है जो निम्नलिखित इंफोग्राफ में प्रदर्शित हैं—

निष्कर्ष

कृषि क्षेत्र के समक्ष विद्यमान विभिन्न चुनौतियों के समाधान के लिये एक समग्र पारितंत्र दृष्टिकोण को अपनाना राष्ट्रीय लक्ष्य प्राप्त करने हेतु महत्त्वपूर्ण है, साथ ही यह किसानों की आय को दोगुना करने और सतत् विकास लक्ष्यों की प्राप्ति जैसी आकांक्षाओं की पूर्ति के लिये भी आवश्यक है। एक बहु-हितधारक दृष्टिकोण का अपनाया जाना इस संदर्भ में महत्त्वपूर्ण हो सकता है, जहाँ सरकार पारितंत्र के अभिकर्त्ताओं के लिये एक प्रवर्तक की भूमिका निभाएगा।

दृष्टि The Vision

अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रम

बाह्य अंतरिक्ष की भू-रणनीति

अमेरिका एवं अन्य 'क्वाड' (QUAD) भागीदारों—ऑस्ट्रेलिया और जापान के साथ बाह्य अंतरिक्ष सहयोग हेतु नए अवसरों का पता लगाने के लिये भारत ने स्वयं को अधिक सक्रीय रूप से संलग्न किया है। बाह्य अंतरिक्ष तेज़ी से उभरता हुआ एक नया क्षेत्र है, जहाँ हाल के वर्षों में अधिकाधिक वाणिज्य एवं प्रतिस्पर्द्धा की स्थिति नज़र आ रही है।

बाह्य अंतरिक्ष में भारत की नई रणनीतिक अभिरुचि दो प्रमुख रुझानों को चिह्नित करने पर आधारित है। पहला, 21वीं सदी की वैश्विक व्यवस्था को आकार देने में उभरती प्रौद्योगिकियों की केंद्रीयता; और दूसरा, बाह्य अंतरिक्ष में शांति एवं स्थिरता के लिये नए नियमों के निर्धारण की तात्कालिकता।

बाह्य अंतरिक्ष की भू-रणनीति

- बाह्य अंतरिक्ष में वाणिज्यिक पहलू में प्राय: पारंपरिक रूप से अमेरिका का दबदबा रहा है। रूस के साथ अमेरिका की सैन्य प्रतिस्पर्द्धा ने सुरक्षा क्षेत्र के लिये महत्त्वपूर्ण मानदंड स्थापित किये हैं।
  - नागरिक और सैन्य दोनों ही क्षेत्रों में एक प्रमुख अंतरिक्ष शक्ति के रूप में चीन का उदय 'एस्ट्रोपॉलिटिक्स' (Astropolitics) यानी 'खगोलीय राजनीति' को एक नया आकार दे रहा है।
- चीन की अंतरिक्ष क्षमताओं के नाटकीय विस्तार एवं बाह्य अंतरिक्ष पर अपना दबदबा बढ़ाने की उसकी महत्त्वाकांक्षा ने विश्व के लोकतांत्रिक देशों को अपने राष्ट्रीय हितों की सुरक्षा के साथ-साथ अंतरिक्ष में एक संवहनीय व्यवस्था को बढ़ावा देने हेतु एक साथ आने की नई तात्कालिकता उत्पन्न की है।

भारत के लिये इसका महत्त्व

- अंतरिक्ष क्षेत्र देश की रक्षा व्यवस्था की संभावित चौथी शाखा के रूप में उभर रहा है।
- अमेरिका, रूस और चीन पहले से ही एक प्रमुख अंतरिक्ष शक्ति बनने की राह पर अग्रसर हैं, इसलिये भारत को उभरती सुरक्षा चुनौतियों का सामना करने के लिये स्वयं को उपयुक्त रूप से तैयार करने की आवश्यकता होगी।
- गौरतलब है कि प्राय: एक अंतरिक्ष शक्ति देश में शत्रुओं या प्रतिस्पर्द्धियों को अंतरिक्ष के उपयोग से वंचित करते हुए अपने हित में अंतरिक्ष का उपयोग करने की क्षमता होती है।
  - भारत के पास पहले से ही अंतरिक्ष का उपयोग करने की उल्लेखनीय क्षमता मौजूद है। लेकिन किसी प्रतिरोधी को अंतरिक्ष के उपयोग से वंचित कर सकने की उसकी क्षमता अभी स्वाभाविक रूप से नगण्य ही है।
  - जहाँ तक कृत्रिम उपग्रहों (Satellites) की बात है, तो भारत के पास कुछ ही सैन्य उपग्रह मौजूद हैं, जबकि देश में 40 से अधिक नागरिक उपग्रहों मौजूद हैं। भारत का पहला समर्पित सैन्य उपग्रह वर्ष 2013 में लॉन्च किया गया था।
- हालाँकि, भारत ने अंतरिक्ष शक्ति बनने की राह में कुछ प्रगति अवश्य की है।
  - हाल ही में आयोजित 'मिशन शक्ति' ने शत्रुओं के उपग्रहों को निशाना बना सकने की भारत की क्षमता का प्रदर्शन किया है।
  - नवस्थापित 'रक्षा अंतरिक्ष एजेंसी' (Defence Space Agency-DSA) को रक्षा अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (DSRO) का सहयोग प्राप्त होगा, जिसे 'प्रतिद्वंद्वी की अंतरिक्ष क्षमता को कमतर करने, बाधित करने या नष्ट करने' के लिये आयुध निर्माण का कार्य सौंपा गया है।

बाह्य अंतरिक्ष भू-राजनीति से संबद्ध समस्याएँ

- अंतरिक्ष का शस्त्रीकरण: अंतरिक्ष का सैन्यीकरण और शस्त्रीकरण बुनियादी रूप से रचनात्मक वाणिज्यिक एवं वैज्ञानिक परियोजनाओं के विपरीत है। अंतरिक्ष में युद्ध की स्थिति शांतिपूर्ण उद्देश्यों के लिये अंतरिक्ष में तैनात प्रणालियों के रखरखाव के लिये आवश्यक अंतर्निहित सहयोग को नष्ट कर देगी।
  - इन तथ्यों के बावजूद, बाह्य अंतरिक्ष के सैन्यीकरण और शस्त्रीकरण संबंधी में लगातार वृद्धि हुई है।

- अंतरिक्ष मलबे की समस्या: मिसाइल द्वारा नष्ट किया गया कोई भी उपग्रह प्रायः कई छोटे टुकड़ों में विखंडित हो जाता है, जो कि अंतरिक्ष मलबे में वृद्धि करता है। अंतरिक्ष में मुक्त रूप से तैरते हुए ये मलबे परिचालित उपग्रहों के लिये संभावित खतरा उत्पन्न करते हैं और इनके कारण उपग्रह वस्तुतः निष्क्रिय या नष्ट भी हो सकते हैं।
    - विभिन्न देशों द्वारा अधिकाधिक उपग्रहों को लॉन्च किये जाने साथ, जहाँ उनमें से प्रत्येक रणनीतिक या व्यावसायिक महत्त्व रखते हैं, भविष्य में अंतरिक्ष मलबा एक बड़ी चुनौती बन सकता है।
- अंतरिक्ष अन्वेषण की प्रतिस्पर्द्धा: 'स्पेस माइनिंग' यानी अंतरिक्ष अन्वेषण को लेकर चल रही मौजूदा प्रतिस्पर्द्धा संघर्ष और सहयोग के एक नए युग की शुरुआत करेगी।
    - यूएस चैंबर ऑफ कॉमर्स के अनुसार, वर्ष 2040 तक वाणिज्यिक अंतरिक्ष उद्योग लगभग 1.5 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर मूल्य का होगा।
- 'मून रश' (Moon Rush): चंद्रमा पर जल और 'पीक्स ऑफ एटरनल लाइट' (Peaks of Eternal Light) की खोज के बाद चाँद के दक्षिणी ध्रुव पर लक्षित 'मून रश' एक नई परिघटना ही बन गई है। उदाहरण के लिये:
    - हाल ही में चीन के चांग'ई 4 (Chang'e 4) ने दक्षिण ध्रुवीय क्षेत्र के अंधेरे हिस्से में वॉन कर्मन क्रेटर (Von Karman crater) में सॉफ्ट लैंडिंग की।
    - अमेरिका के लूनर प्रोग्राम का लक्ष्य अगले दशक में एक बार फिर चंद्रमा पर मानव को भेजना है।
    - नासा भी मुख्यतः दक्षिणी ध्रुव पर अपना ध्यान केंद्रित कर रहा है और यदि यह अभियान सफल होता है, तो यह दक्षिणी ध्रुव पर पहुँचने वाला पहला मानव दल होगा।
    - जेफ़ बेज़ोस (अमेज़न कंपनी के मालिक) ने 'ब्लू मून प्रोजेक्ट' का अनावरण किया है, जिसके तहत अगले कुछ वर्षों में महिलाओं और पुरुषों को चंद्रमा पर भेजने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।
- 'स्पेस सिचुएशनल अवेयरनेस' (SSA) में सभी वस्तुओं- प्राकृतिक (उल्कापिंड) और मानव-निर्मित (उपग्रह) की गति की निगरानी करना और अंतरिक्ष के मौसम पर नज़र रखना शामिल है।
    - वर्तमान समय में अंतरिक्ष हमारे जीवन का अभिन्न अंग बन गया है और अंतरिक्ष-आधारित संचार तथा पृथ्वी अवलोकन में किसी भी व्यवधान के गंभीर परिणाम हो सकते हैं।

'स्पेस सिचुएशनल अवेयरनेस' (SSA)

- पृथ्वी की कक्षा में हज़ारों पिंड मौजूद हैं, जो उपग्रहों और प्रक्षेपणों के लिये संभावित खतरा उत्पन्न करते हैं। 'स्पेस सिचुएशनल अवेयरनेस' (SSA) का अर्थ पृथ्वी की कक्षा में मौजूद पिंडों की निगरानी करना और अनुमान लगाना कि वे किसी भी नियत समय पर कहाँ होंगे।

भारत के बाह्य अंतरिक्ष अवसरों की संभावनाएँ

- भारत, अंतरिक्ष क्षेत्र में सक्रीय रूप से संलग्न है, जिसने बीते दशकों में उल्लेखनीय अंतरिक्ष क्षमताओं का विकास किया है। वहीं अमेरिका स्वीकार करता है कि वह अंतरिक्ष व्यवस्था को एकतरफा परिभाषित नहीं करता है और इसलिये वह नए भागीदारों की तलाश कर रहा है।
    - वाशिंगटन में जारी भारत-अमेरिका संयुक्त बयान में 'स्पेस सिचुएशनल अवेयरनेस समझौता ज्ञापन' को इस वर्ष के अंत तक अंतिम रूप देने की योजना पर प्रकाश डाला गया है, जो बाह्य अंतरिक्ष गतिविधियों की दीर्घकालिक संवहनीयता को सुनिश्चित करने की दिशा में डेटा और सेवाओं को साझा करने में मदद करेगा।
- 'स्पेस सिचुएशनल अवेयरनेस' पर अंतर्राष्ट्रीय सहयोग समुद्री क्षेत्र जागरूकता पर संपन्न समझौतों के ही समान है, जो विभिन्न महासागरीय मेट्रिक्स पर जानकारी साझा करने की सुविधा प्रदान करते हैं।
- 'क्वाड' द्वारा स्थापित नया अंतरिक्ष कार्यसमूह सहयोग के नए अवसरों की पहचान करेगा और जलवायु परिवर्तन की निगरानी, आपदा प्रतिक्रिया एवं तत्परता, महासागरों एवं समुद्री संसाधनों के सतत् उपयोग और साझा क्षेत्रों में चुनौतियों पर अनुक्रिया जैसे शांतिपूर्ण उद्देश्यों के लिये उपग्रह डेटा की साझेदारी सुनिश्चित करेगा।
    - क्वाड नेताओं ने "बाह्य अंतरिक्ष के सतत् उपयोग को सुनिश्चित करने के लिये नियमों, मानदंडों, दिशानिर्देशों और सिद्धांतों पर परामर्श करने' के प्रति प्रतिबद्धता ज़ाहिर की है।

आगे की राह

- सार्वजनिक और निजी संस्थानों का आपसी सहयोग: भारत को अपने अंतरिक्ष कार्यक्रम के नियामक, वाणिज्यिक और वैज्ञानिक अनुसंधान तत्त्वों को संरचनात्मक रूप से अलग-अलग करने की आवश्यकता है।
  - अंतरिक्ष अनुसंधान एवं विकास पर वित्तपोषण को बढ़ाया जाना चाहिये और इसरो तथा निजी अनुसंधान संस्थानों को साथ मिलकर कार्य करने के लिये प्रोत्साहित किया जाना चाहिये।
  - इसके साथ ही, एक स्वतंत्र नियामक स्थापित किये जाने की आवश्यकता है जो इसरो एवं नए अंतरिक्ष ऑपरेटरों को एकसमान अवसर प्रदान करते हुए उनका नियंत्रण कर सके।
- एक सुदृढ़ नियामक ढाँचे की आवश्यकता: अपनी अंतरिक्ष गतिविधियों को बढ़ावा देने और अंतर्राष्ट्रीय हितों की रक्षा करने हेतु भारत को एक सुदृढ़ नियामक ढाँचे का भी निर्माण करना चाहिये।
  - भारत को वर्तमान अंतरिक्ष व्यवस्था के लिये उभरती चुनौतियों पर भी कड़ी नज़र रखनी चाहिये तथा बाह्य अंतरिक्ष क्षेत्र की प्रकृति के विषय में अपनी पूर्ववर्ती राजनीतिक धारणाओं की समीक्षा करनी चाहिये, साथ ही नए वैश्विक मानदंडों के विकास में योगदान करना चाहिये, जो बाह्य अंतरिक्ष संधि (Outer Space Treaty) के मूल सार को सशक्त करेंगे।
- अपनी अंतरिक्ष संपत्तियों की प्रभावी ढंग से रक्षा करने के लिये भारत के पास मलबे एवं अंतरिक्ष यान से लेकर आकाशीय पिंडों तक सभी खगोलीय निकायों को ट्रैक करने की सटीक क्षमता मौजूद होनी चाहिये।
  - चूँकि सटीक ट्रैकिंग ही अंतरिक्ष में लगभग सभी आवश्यक गतिविधियों का आधार है, इसलिये इस महत्त्वपूर्ण क्षमता को स्वदेशी रूप से विकसित किया जाना चाहिये।
- अंतरिक्ष रक्षा की प्रभावकारिता के लिये भारत को विभिन्न प्रकार के अंतरिक्ष आयुधों (भौतिक, इलेक्ट्रॉनिक और साइबर) के मामले में एक न्यूनतम और विश्वसनीय क्षमता हासिल करने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

बाह्य अंतरिक्ष क्षेत्र की चुनौतियों और अवसरों के व्यापक स्तर को देखते हुए तात्कालिक और व्यापक सुधार की आवश्यकता है। इस आवश्यकता की पूर्ति उच्चतम राजनीतिक स्तर से ही की जा सकती है। वर्ष 2015 में हिंद महासागर पर प्रधानमंत्री के संभाषण ने समुद्री मामलों पर राष्ट्रीय ध्यान को केंद्रित किया था। भारत को बाह्य अंतरिक्ष के मामले में भी वैसे ही हस्तक्षेप की आवश्यकता है।

भारत और वर्तमान वैश्विक व्यवस्था

संदर्भ

किसी भी अन्य देश की तरह, भारत की विदेश नीति भी अपने प्रभाव क्षेत्र के विस्तार, विभिन्न राष्ट्रों के बीच अपनी भूमिका की वृद्धि और एक उभरती हुई शक्ति के रूप में अपनी उपस्थिति दर्ज कराने की परिकल्पना करती है।

वर्ष 2021 विदेश नीति उद्देश्यों की पूर्ति के दृष्टिकोण से कई चुनौतियाँ और अवसर लेकर आया है। नए परिदृश्यों में नई सोच की आवश्यकता होती है। वर्तमान वैश्विक व्यवस्था की बदलती हुई गतिशीलता के मद्देनज़र भारत को सुचिंतित कार्रवाई करने की आवश्यकता है।

वर्तमान वैश्विक व्यवस्था

- वर्तमान में विश्व एक असंतुलन और दिशाहीनता का शिकार है। हम न तो द्विध्रुवीय शीत युद्ध की स्थिति में हैं और न ही एक बहुध्रुवीय व्यवस्था की ओर आगे बढ़ रहे हैं, बल्कि संपूर्ण विश्व धीरे-धीरे कई शक्ति केंद्रों में विभाजित होता जा रहा है।
- कोविड-19 महामारी के प्रति किसी एकजुट या सुसंगत अंतर्राष्ट्रीय प्रतिक्रिया के अभाव ने विश्व में एक अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था की अनुपस्थिति और बहुपक्षीय संस्थानों की प्रभावहीनता की पुष्टि की है। जलवायु परिवर्तन और अन्य अंतर्राष्ट्रीय खतरों के प्रति भी अंतर्राष्ट्रीय प्रतिक्रिया अप्रभावी रही है।
- वैश्वीकरण से पीछे हटना और संरक्षणवाद, व्यापार का क्षेत्रीयकरण, शक्ति संतुलन का स्थानांतरण, चीन एवं अन्य शक्तियों का उदय और चीन-संयुक्त राज्य अमेरिका की रणनीतिक प्रतिद्वंद्विता जैसे कारकों ने विश्व के भू-राजनीतिक और आर्थिक गुरुत्व केंद्रों को एशिया की ओर स्थानांतरित कर दिया है।

- राज्यों के बीच और उनके अंदर असमानता की स्थिति ने एक संकीर्ण राष्ट्रवाद और क्षेत्रवाद को जन्म दिया है। हम एक नए ध्रुवीकृत युग में प्रवेश कर रहे हैं और 'एंथ्रोपोसीन' युग के पारिस्थितिक संकटों का सामना कर रहे हैं, जहाँ जलवायु परिवर्तन एक अस्तित्वपरक खतरा बनता जा रहा है।

'एशियन सेंचुरी'

- अनुमान के मुताबिक, आगामी दशक में एशिया भू-राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता का मुख्य क्षेत्र बना रहेगा और भले ही सापेक्षिक रूप से अमेरिका की शक्ति घट रही है, लेकिन इसके बावजूद वह एक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण शक्ति बना रहेगा।
- यह समय चीन के लिये एक महत्त्वपूर्ण अवसर प्रदान कर सकता है, हालाँकि वह जिस जल्दबाजी में है, उससे प्रतीत होता है कि उसे भय है कि पश्चिम और अन्य देशों के प्रतिकूल रुख के कारण यह अवसर समाप्त हो सकता है।
- चीन का भूगोल उसे भूमि एवं समुद्र दोनों ही क्षेत्रों में एक सक्रियता के लिये विवश करता है। चीन के प्रभाव और उसकी शक्ति को देखते हुए यह अनुमान लगाया जा सकता है कि भारतीय क्षेत्र में भी चीन की सक्रियता आने वाले समय में जारी रहेगी।
- इसके परिणामस्वरूप भारत और चीन के बीच निरंतर संघर्ष और अर्द्ध-शत्रुता के संबंध बने रहेंगे, जिसका लाभ अन्य देशों को मिल सकता है। मौजूदा परिदृश्य को देखते हुए आने वाले समय में टकराव एवं सहयोग का यह मिश्रित संबंध ही भारत-चीन संबंधों को चिह्नित करता रहेगा।
- समग्र रूप से, एशिया में महाशक्तियों के बीच पारंपरिक संघर्ष भले एक वास्तविक स्थिति न हो, लेकिन इससे अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था में हिंसा और विवाद के दूसरे रूपों और स्तरों की वृद्धि होगी।

भारत के लिये चुनौतियाँ

- चीन की मज़बूत स्थिति: चीन एकमात्र ऐसा प्रमुख देश था, जिसने वर्ष 2020 के अंत में सकारात्मक विकास दर दर्ज की थी और इसकी अर्थव्यवस्था वर्ष 2021 में और तेज़ी से विकास करने की ओर अग्रसर है।
    - सैन्य रूप से, चीन ने स्वयं को और मज़बूत कर लिया है और वर्ष 2021 में अपने तीसरे विमानवाहक पोत के प्रक्षेपण की घोषणा के साथ हिंद-प्रशांत महासागर क्षेत्र पर अपना दबदबा बढ़ाने का प्रयास किया है।
    - इस परिप्रेक्ष्य में, चीन-भारत संबंधों में किसी बड़े सुधार की संभावना नहीं है और भारतीय एवं चीनी सशस्त्र बलों के बीच टकराव जारी रहने का अनुमान है।
- रूस-चीन धुरी का विकास: रूस, क्षेत्रीय मामलों में अधिकाधिक रुचि प्रदर्शित करने लगा है। इसके अलावा वर्ष 2014 में क्रीमिया के कब्ज़े के बाद रूस पर लगाए गए प्रतिबंधों ने रूस को चीन के निकट ला दिया है।
    - इससे भारत जैसे देशों में उसकी रुचि कम होने का संकेत भी मिलता है।
    - इसके साथ ही, अमेरिका के साथ भारत की निकटता ने भी रूस और ईरान जैसे पारंपरिक मित्रों के साथ भारत के संबंधों को कमज़ोर कर दिया है।
- मध्य-पूर्व के बदलते समीकरण: इज़राइल और चार अरब देशों- संयुक्त अरब अमीरात, बहरीन, मोरक्को और सूडान के बीच अमेरिका की मध्यस्थता से बना तालमेल इस क्षेत्र में बदलते परिदृश्य को प्रतिबिंबित करता है।
    - हालाँकि, अब्राहम समझौते (Abraham Accords) को लेकर व्यक्त अति-उत्साह के बावजूद वास्तविक स्थिति अस्थिर ही बनी हुई है और अभी भी ईरान एवं इज़राइल के बीच टकराव का जोखिम बना हुआ है।
    - इस भू-भाग की रणनीतिक परिवर्तनशीलता ईरान को अपनी स्थिति मज़बूत करने हेतु अपनी परमाणु क्षमता का उपयोग करने के लिये प्रेरित कर सकता है।
    - यह भारत के लिये समस्याजनक है, क्योंकि उसके दोनों देशों के साथ संबंध हैं।
- भारत का 'सेल्फ आइसोलेशन': वर्तमान में भारत दो महत्त्वपूर्ण 'सुपरनेशनल' निकायों— गुटनिरपेक्ष आंदोलन (NAM) और दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संघ (SAARC) से अलग-थलग बना हुआ है, जिनके वह संस्थापक सदस्य रहा था।
    - इसके अलावा, भारत ने क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक भागीदारी (RCEP) से भी बाहर रहने का विकल्प चुना है।
    - यह 'सेल्फ आइसोलेशन' वैश्विक शक्ति बनने की भारत की आकांक्षा के साथ सुसंगत नहीं है।

- पड़ोसी देशों के साथ कमज़ोर संबंध: भारतीय विदेश नीति के लिये एक अधिक चिंताजनक विषय पड़ोसी देशों के साथ कमज़ोर होते संबंध भी है।
  - इसे श्रीलंका के साथ चीन की 'चेक बुक डिप्लोमेसी', NRC के मुद्दे पर बांग्लादेश के साथ तनाव और नए नक्शे के जारी होने के कारण नेपाल के साथ हालिया सीमा विवाद जैसे उदाहरणों से समझा जा सकता है।

आगे की राह

- अनिश्चितता और लगातार बदलता भू-राजनीतिक माहौल स्पष्ट रूप से भारतीय नीति के लिये उल्लेखनीय चुनौतियाँ उत्पन्न करते हैं, यहीं भारत के लिये कुछ अवसर भी उपलब्ध हैं, जो भारत के रणनीतिक विकल्पों एवं कुटनीतिक अवसरों के दायरे का विस्तार कर सकते है, यदि हम विशेष रूप से भारतीय उप-महाद्वीप में आंतरिक और बाह्य रूप से अपनी नीतियों को समायोजित कर सकें।
  - भारत को एशिया में बहुध्रुवीयता की स्थापना का लक्ष्य रखना चाहिये।
- विषय-आधारित गठबंधन: भारत को बदलती परिस्थितियों के साथ तालमेल बिठाना होगा। इस अनिश्चित और अधिक अस्थिर दुनिया से संबद्ध होने के अलावा उसके पास अन्य कोई विकल्प नहीं है। ऐसा करने का एक बेहतर तरीका विषय-आधारित गठबंधन की स्थापना करना है, जहाँ विभिन्न अभिकर्त्ता शामिल होंगे और उनकी संलग्नता उनकी रुचि और क्षमता पर निर्भर होगी।
- अमेरिका के साथ बढ़ती सुरक्षा संगति भारत के विकास के लिये आवश्यक क्षेत्रों जैसे- ऊर्जा, व्यापार, निवेश, शिक्षा और स्वास्थ्य आदि में सहयोग के लिये भी महत्त्वपूर्ण हो सकती है।
  - इसके अतिरिक्त, जलवायु परिवर्तन एवं ऊर्जा, नवीकरणीय ऊर्जा के लिये तकनीकी समाधान एवं डिजिटल सहयोग जैसे अन्य क्षेत्रों में भारत और अमेरिका आपसी सहयोग बढ़ा सकते हैं।
- 'सार्क' को पुनर्जीवित करना: भारत इस उपमहाद्वीप और हिंद महासागर क्षेत्र में पड़ोसी देशों के लिये समृद्धि और सुरक्षा दोनों का प्राथमिक स्रोत बन सकता है। पड़ोसी देशों के प्रति भारत की नीति के अत्यधिक प्रतिभूतिकरण ने व्यापार को भूमिगत कर दिया है, साथ ही इसने देश की सीमाओं का अपराधीकरण किया है और पूर्वोत्तर भारत में चीनी सामानों के व्यापक प्रवेश को सक्षम कर दिया है जो स्थानीय उद्योगों को नष्ट कर रहे हैं।
  - चीन पर निर्भरता कम करते और बाहरी संतुलन की तलाश करते हुए भारत के प्राथमिक प्रयास 'आत्मनिर्भरता' पर केंद्रित होने चाहिये।
  - यदि कोई एक देश है जो अपने आकार, जनसंख्या, आर्थिक क्षमता, वैज्ञानिक एवं तकनीकी क्षमताओं के मामले में चीन से बराबरी कर सकता है या उससे भी आगे निकल सकता है, तो वह भारत ही है।
- 'आत्मनिर्भरता' का महत्त्व: विदेशों में अपनी भूमिका और प्रभाव सुनिश्चित करने के लिये भारत कई कदम उठा सकता है, जो भारत के विकास में मददगार हो सकते हैं। आर्थिक नीति को राजनीतिक और रणनीतिक संलग्नता से सुमेलित किया जाना चाहिये।
  - वैश्वीकरण की भारत के विकास में केंद्रीय भूमिका रही है। भारत के लिये एक अधिक सक्रिय क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय भूमिका वैश्विक अर्थव्यवस्था के हाशिये पर रहकर नहीं पाई जा सकती।
  - वर्तमान विश्व में आत्मनिर्भरता के लक्ष्य को वैश्विक अर्थव्यवस्था का अंग होकर ही साकार किया जा सकता है। हमें चीन की नकल नहीं करनी चाहिये, जहाँ एक सभ्यतागत देश होने और 'विक्टिम' होने के दावे के साथ आगे बढ़ा जा रहा है। इसके बजाय हमें अपनी स्वयं की शक्ति और ऐतिहासिक राष्ट्रीय पहचान की पुष्टि करनी चाहिये।
- पर्याप्त मात्रा में बाह्य सहायता: चीन के साथ मौजूदा गतिरोध ने वर्ष 1963 में जवाहरलाल नेहरू द्वारा व्यक्त इस मत की पुष्टि की कि भारत को "पर्याप्त मात्रा में बाहरी सहायता" की आवश्यकता है।
  - इस संदर्भ में भारत को फ्राँस, जर्मनी और ब्रिटेन जैसे यूरोपीय देशों के अलावा अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया जैसे देशों से निरंतर समर्थन की आवश्यकता होगी।
  - भारत को 'इंडो-पैसिफिक' आख्यान में यूरोप के प्रवेश का स्वागत करना चाहिये, क्योंकि फ्राँस और जर्मनी अपनी इंडो-पैसिफिक रणनीति के साथ पहले ही सामने आ भी चुके हैं।

नोट :

निष्कर्ष

संक्षेप में, भारत के अंतर्राष्ट्रीय प्रभाव के मूलभूत स्रोतों की रक्षा करने के साथ-साथ आत्मनिर्भरता एक अत्यंत आवश्यक पूर्व शर्त है। भारत को एक मज़बूत, सुरक्षित और समृद्ध देश में बदलने के लिये हम जिस बाह्य पथ पर आगे बढ़ना चाहते हैं, हमारा आंतरिक प्रक्षेप पथ उससे अलग नहीं रखा जा सकता।

'हिंद-प्रशांत क्षेत्र' में यूरोपीय संघ की भूमिका

संदर्भ

यूरोपीय संघ (European Union- EU) हिंद-प्रशांत क्षेत्र (Indo-Pacific) में घनिष्ठ संबंधों के निर्माण और अपनी मज़बूत उपस्थिति पर ज़ोर दे रहा है, जो कि 'हिंद-प्रशांत क्षेत्र में सहयोग हेतु यूरोपीय संघ की रणनीति' से स्पष्ट हो जाता है।

'यूरोपीय आयोग' के अध्यक्ष ने राय प्रकट की है कि "यदि यूरोप को अधिक सक्रिय वैश्विक प्रतिनिधि बनना है, तो उसे अगली पीढ़ी की भागीदारियों पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है।" हिंद-प्रशांत रणनीति के अलावा, यूरोपीय संघ चीन के 'बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव' (BRI) के साथ प्रतिस्पर्द्धा करने हेतु 'ग्लोबल गेटवे' (Global Gateway) योजना शुरू करने पर भी विचार कर रहा है।

हाल ही में, जर्मनी, फ्राँस और नीदरलैंड जैसे सभी सदस्य देशों ने हिंद-प्रशांत की अवधारणा को अपनाना शुरू कर दिया है और इसे अपनी राष्ट्रीय सुरक्षा रणनीतियों के साथ एकीकृत भी कर रहे हैं। हिंद-प्रशांत को एक रणनीतिक अवधारणा के रूप में अपनाने के लिये यूरोपीय संघ को प्रेरित करने में इन्हीं सदस्य देशों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है।

यूरोपीय संघ की हिंद-प्रशांत रणनीति

- संवहनीय आपूर्ति शृंखला: हिंद-प्रशांत भागीदारों के साथ इस संलग्नता का प्राथमिक उद्देश्य अधिक प्रत्यास्थी और संवहनीय वैश्विक मूल्य शृंखलाओं का निर्माण करना है।
- समान विचारधारा वाले देशों के साथ साझेदारी: ऐसा प्रतीत होता है कि यूरोपीय संघ की रणनीति वर्तमान में हिंद-प्रशांत क्षेत्र में पहले से स्थापित साझेदारियों को और सुदृढ़ करने तथा समान विचारधारा वाले देशों के साथ नई साझेदारियाँ विकसित करने पर अधिक केंद्रित है, ताकि हिंद-प्रशांत क्षेत्र में उसकी भूमिका और बढ़ती उपस्थिति सुनिश्चित हो सके।
- 'क्वाड' (Quad) सदस्यों के साथ सहयोग की इच्छा: यूरोपीय संघ 'क्वाड' सदस्य देशों के साथ जलवायु परिवर्तन, प्रौद्योगिकी और वैक्सीन जैसे विषयों में सहयोग की इच्छा रखता है।
    - इसके अतिरिक्त, पश्चिमी-प्रशांत क्षेत्र में चीन की विस्तारवादी प्रवृत्तियों और हिंद महासागर में इसके बढ़ते प्रभाव को देखते हुए यूरोपीय संघ हिंद-प्रशांत क्षेत्र में 'क्वाड' देशों के साथ सहयोग को महत्त्वपूर्ण मानता है।
- यूरोपीय संघ, एशिया में एक बड़ी भूमिका निभाने, अधिक उत्तरदायित्व का वहन करने और इस भू-भाग के मामलों पर एक प्रभाव रखने की आवश्यकता महसूस करता है, क्योंकि एशिया का भविष्य यूरोप के साथ संबद्ध है।
- रक्षा और सुरक्षा यूरोपीय संघ की हिंद-प्रशांत रणनीति के महत्त्वपूर्ण तत्व हैं, जिसका उद्देश्य सुरक्षित संचार, क्षमता निर्माण एवं इंडो-पैसिफिक में नौसैनिक उपस्थिति के माध्यम से एक 'स्वतंत्र एवं नियम-आधारित क्षेत्रीय सुरक्षा संरचना को बढ़ावा देना है।

यूरोपीय संघ के लिये हिंद-प्रशांत क्षेत्र का महत्त्व

- महज़ छह मिलियन आबादी वाले डेनमार्क जैसे देश का भारत के साथ एक महत्त्वपूर्ण हरित साझेदारी स्थापित करना इस बात की पुष्टि करता है कि यूरोप के छोटे-छोटे देश भी भारत के आर्थिक, तकनीकी और सामाजिक परिवर्तन में बहुत कुछ योगदान कर सकते हैं।
    - छोटे से देश- 'लक्ज़मबर्ग' में भीं व्यापक वित्तीय शक्ति मौजूद हैं, वहीं 'नॉर्वे' भारत को प्रभावशाली समुद्री प्रौद्योगिकियाँ प्रदान कर सकता है, एस्टोनिया एक महत्त्वपूर्ण साइबर शक्ति है, 'चेक रिपब्लिक' ऑप्टोइलेक्ट्रॉनिक्स के क्षेत्र में एक मज़बूत शक्ति है, पुर्तगाल 'लुसोफोन' (Lusophone) भू-भाग में प्रवेश का एक द्वार बन सकता है, जबकि स्लोवेनिया 'कोपेर' में अवस्थित अपने एड्रियाटिक समुद्री बंदरगाह के माध्यम से यूरोप के मुख्य क्षेत्र तक वाणिज्यिक पहुँच प्रदान करता है।
    - अब जब भारत इन संभावनाओं को समझने लगा है तो 27 देशों के यूरोपीय संघ के साथ नए रास्ते भी खुलने लगे हैं।

- व्यापार और निवेश के मामले में यूरोपीय संघ और हिंद-प्रशांत नैसर्गिक भागीदार क्षेत्र हैं।
  - हिंद-प्रशांत क्षेत्र में यूरोपीय संघ शीर्ष निवेशक, विकास सहयोग का अग्रणी प्रदाता और सबसे बड़े व्यापारिक भागीदारों में से एक है।
  - माल और सेवाओं के वैश्विक व्यापार में हिंद-प्रशांत तथा यूरोप संयुक्त रूप से 70% से अधिक की हिस्सेदारी रखते हैं और प्रत्यक्ष विदेशी निवेश प्रवाह में उनकी हिस्सेदारी 60% से अधिक है।
  - हिंद-प्रशांत और यूरोप के बीच व्यापारिक आदान-प्रदान विश्व के किसी भी अन्य भौगोलिक क्षेत्रों की तुलना में काफी अधिक है।
  - हिंद-प्रशांत क्षेत्र में 'मलक्का जलडमरूमध्य', 'दक्षिण चीन सागर' और 'बाब अल-मंदेब जलडमरूमध्य' जैसे विश्व के कुछ प्रमुख जलमार्ग मौजूद हैं जो यूरोपीय संघ की व्यापारिक गतिविधियों के लिये भारी महत्त्व रखते हैं।

यूरोपीय संघ की हिंद-प्रशांत रणनीति के प्रभाव

- क्षेत्रीय सुरक्षा में योगदान: व्यापक भू-राजनीतिक पहुँच के साथ एक मज़बूत यूरोप भारत के लिये बेहद अनुकूल है। भारत इस बात से अवगत है कि यूरोप हिंद-प्रशांत क्षेत्र में अमेरिका की सैन्य क्षमता की बराबरी नहीं कर सकता। लेकिन यह सैन्य संतुलन को सुदृढ़ करने और कई अन्य तरीकों से क्षेत्रीय सुरक्षा के लिये योगदान करने में उल्लेखनीय सहायता कर सकता है।
  - यूरोप हिंद-प्रशांत क्षेत्र में भविष्य के परिणामों को प्रभावित कर सकने की भारत की क्षमता में उल्लेखनीय रूप से वृद्धि कर सकता है। यह ऑस्ट्रेलिया, जापान और संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ भारत के 'क्वाड' गठबंधन के लिये एक मूल्यवान पूरकता भी प्रदान कर सकता है।
- विकास अवसंरचना के साथ सैन्य सुरक्षा: यूरोपीय संघ की हिंद-प्रशांत रणनीति का इस क्षेत्र पर सैन्य सुरक्षा की तुलना में कहीं अधिक त्वरित और व्यापक विषयों तक विस्तृत प्रभाव पड़ने की संभावना है।
  - इसमें व्यापार और निवेश से लेकर हरित भागीदारी तक, गुणवत्तापूर्ण अवसंरचना निर्माण से लेकर डिजिटल भागीदारी तक और क्षेत्रीय शासन को सुदृढ़ करने से लेकर अनुसंधान एवं नवाचार को बढ़ावा देने तक विविध विषय शामिल हैं।
- बहुध्रुवीय विश्व: अमेरिका और चीन के बीच गहरे होते संघर्ष के कारण दक्षिण पूर्व एशिया के लिये घटती संभावनाओं के परिदृश्य में यूरोप को एक महत्त्वपूर्ण शक्ति के रूप में देखा जा रहा है, जो इस भूभाग के लिये व्यापक रणनीतिक विकल्पों के द्वार खोल सकता है।
  - भारत में भी यही दृष्टिकोण मौजूद है, जो अब यूरोपीय संघ को एक बहुध्रुवीय विश्व के निर्माण के लिये एक महत्त्वपूर्ण तत्व के रूप में देखता है।

संबद्ध मुद्दे

- कुछ एशियाई देश यूरोप को रणनीतिक संदेह की दृष्टि से देखते हैं, जबकि कई अन्य देश उसे एक मूल्यवान भागीदार के रूप में देखते हैं।
- कई ऐसे अन्य आसन्न मुद्दे भी हैं जिनका भारत-प्रशांत क्षेत्र सामना कर रहा है और जो यूरोपीय देशों के स्वयं के सुरक्षा हितों पर प्रभाव डाल सकते हैं, जैसे उभरती प्रौद्योगिकियों के संभावित जोखिम, आपूर्ति शृंखला लचीलेपन को सुनिश्चित करना और दुष्प्रचार का मुकाबला करना।
- इस क्षेत्र की सीमित संयुक्त सैन्य क्षमताओं और अमेरिका पर निरंतर निर्भरता को देखते हुए, सुरक्षा एजेंडे के सैन्य आयाम को अभी तक गहराई से नहीं समझा गया है।
  - संयुक्त सैन्य अभ्यासों, नौवहन की स्वतंत्रता सुनिश्चित करना और समुद्री डकैती से निपटने जैसे अन्य विषय भी महत्त्वपूर्ण हैं, जहाँ फ्राँस और जर्मनी हिंद-प्रशांत क्षेत्र के अन्य देशों के साथ संयुक्त सैन्य अभ्यास में पहले भी संलग्न हो चुके हैं।

आगे की राह

- यूरोपीय संघ के सदस्य देशों को चीन के साथ और इस क्षेत्र के भीतर अपनी संलग्नता को बेहतर सामंजित करने की आवश्यकता है और इस विषय में यूरोपीय संघ की भूमिका को और परिष्कृत किया जाना चाहिये।
- भागीदारों के साथ यूरोपीय संघ के सहयोग का सुदृढ़ होना आवश्यक है और इसे एक वैकल्पिक संवहनीय मॉडल के रूप में अपना महत्त्व प्रदर्शित करना होगा।
- यदि यूरोपीय संघ हिंद-प्रशांत क्षेत्र में अपने व्यापक दृष्टिकोण को आगे बढ़ाना और इसका नेतृत्त्व करना चाहता है, तो भारत, आसियान, जापान, ऑस्ट्रेलिया और ब्रिटेन के साथ एक सुसंगत एवं समन्वित कार्रवाई ही एकमात्र विकल्प है।</ul style="list-style-type: circle;">

नोट :

- डिजिटल कनेक्टिविटी को बढ़ावा देने हेतु संयुक्त परियोजनाओं को कार्यान्वित करना इस दिशा में पहला कदम हो सकता है।

निष्कर्ष

भारत को हिंद-प्रशांत क्षेत्र में यूरोपीय संघ के प्रवेश का स्वागत करना चाहिये, क्योंकि यूरोप अपने व्यापक आर्थिक प्रभाव, प्रौद्योगिकीय क्षमता और नियामक शक्ति के साथ एक बहुध्रुवीय विश्व और एक पुनर्संतुलित हिंद-प्रशांत का वादा कर सकता है जो स्वयं भारत की इच्छाओं और आवश्यकताओं के अनुकूल है।

भारत की रणनीति में "अमेरिका को संलग्न करना, चीन पर नियंत्रण रखना, यूरोप के लिये अवसर बनाना, रूस को आश्वस्त करना, जापान को एक हिस्सेदार बनाना शामिल है। आवश्यकता यह भी है कि यूरोप के लिये अवसर के निर्माण के तरीकों पर ज़ोर दिया जाए।

दृष्टि The Vision

पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण

भारतीय कृषि क्षेत्र और पर्यावरण

संदर्भ

'जलवायु परिवर्तन पर अंतर-सरकारी पैनल' (Intergovernmental Panel on Climate Change- IPCC) की छठी आकलन रिपोर्ट में मानव जाति के लिये 'कोड रेड' जारी करते हुए कहा गया है कि पृथ्वी का 1.5 डिग्री सेल्सियस गर्म होना अपरिहार्य है।

यद्यपि वैश्विक स्तर पर 'पर्यावरणीय स्वास्थ्य' को महत्त्व दिया जा रहा है, लेकिन रिकवरी की गति उतनी तीव्र नहीं है जिस गति से क्षरण हो रहा है।

भारत के संदर्भ में, कृषि एवं संबद्ध क्षेत्र ऊर्जा क्षेत्र एवं विनिर्माण क्षेत्र के बाद ग्रीनहाउस गैस का तीसरा सबसे बड़ा उत्सर्जक है।

कृषि क्षेत्र पर व्यापक रूप से निर्भर होने के कारण, भारत को अपनी कृषि व्यवस्था में कुछ महत्त्वपूर्ण परिवर्तन लाने एवं खेती एवं पशुधन प्रबंधन के कार्बन-कुशल तरीकों को अपनाने की आवश्यकता है।

भारत: जलवायु परिवर्तन एवं कृषि

- वायु प्रदूषण में भारत की स्थिति: विश्व वायु गुणवत्ता रिपोर्ट, 2020 के अनुसार, विश्व के 30 सबसे प्रदूषित शहरों में से 22 शहर भारत में हैं और दिल्ली विश्व की सबसे प्रदूषित राजधानी है।
  - आसपास के राज्यों में पराली जलाने के कारण दिल्ली सर्दियों के मौसम में गंभीर वायु प्रदूषण का शिकार होती है।
  - इस अवधि के दौरान 'वायु गुणवत्ता सूचकांक' (AQI) औसतन 300 के पार चला जाता है और कुछ दिन यह 600-800 तक के उच्च स्तर पर भी पहुँच जाता है, जबकि सुरक्षित सीमा 50 से कम है।
- ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन: वैश्विक स्तर पर भारत, चीन और अमेरिका के बाद ग्रीनहाउस गैस का तीसरा सबसे बड़ा उत्सर्जक है, जो वार्षिक रूप से लगभग 2.6 बिलियन टन CO_2 का उत्सर्जन करता है।
  - हालाँकि भारत का प्रति व्यक्ति उत्सर्जन मात्र 1.8 टन है, जो 4.4 टन प्रति व्यक्ति उत्सर्जन के वैश्विक औसत से काफी कम है।
  - भारत ने अपने 'राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान' (NDCs) में वर्ष 2030 तक अपने सकल घरेलू उत्पाद की उत्सर्जन तीव्रता को वर्ष 2005 के स्तर से 33-35% तक कम करने की प्रतिबद्धता जताई है।
- भारत का क्षेत्रवार उत्सर्जन: वैश्विक स्तर पर बिजली एवं ऊष्मा उत्पादन, कृषि, वानिकी और अन्य भूमि उपयोग उत्सर्जन के 50% भाग का निर्माण करते हैं।
  - भारत में उत्सर्जन में सर्वाधिक हिस्सेदारी ऊर्जा क्षेत्र (44%), विनिर्माण एवं निर्माण क्षेत्र (18%) और कृषि, वानिकी एवं भूमि उपयोग क्षेत्रों (14%) की है।
    - उत्सर्जन में शेष भागीदारी परिवहन, औद्योगिक प्रक्रियाओं और अपशिष्ट क्षेत्रों की है।
- कृषि और जलवायु परिवर्तन:
  - कुल GHG उत्सर्जन: कुल उत्सर्जन में कृषि की हिस्सेदारी वर्ष 1994 में 28% से धीरे-धीरे घटकर वर्ष 2016 में 14% हो गई है।
    - हालाँकि समग्र रूप से कृषि क्षेत्र का उत्सर्जन वर्ष 2018 में बढ़कर लगभग 650 मिलियन टन CO_2 हो गया है।
  - उत्सर्जन वर्गीकरण: भारतीय कृषि क्षेत्र में उत्सर्जन मुख्य रूप से पशुधन क्षेत्र (54.6%) और नाइट्रोजन उर्वरक (19%) के उपयोग से होता है।
    - अवायवीय स्थितियों में चावल की खेती कृषि उत्सर्जन के एक बड़े भाग (17.5%) का निर्माण करती है।
    - कृषि मृदा, नाइट्रस ऑक्साइड (N_2O) उत्सर्जन का सबसे बड़ा स्रोत है।
    - वर्ष 1980-81 से वर्ष 2014-15 के बीच नाइट्रोजन-उर्वरक के उपयोग से N_2O उत्सर्जन में 358% की वृद्धि हुई।

नोट :

कार्बन-कुशल कृषि की ओर

- 'कार्बन-कुशल कृषि' की अवधारणा को कानूनी समर्थन प्रदान करना: कृषि क्षेत्र के लिये एक विशिष्ट कार्बन नीति तैयार की जानी चाहिये, जो कार्बन उत्सर्जन को कम करने और वैश्विक स्तर पर व्यापार-योग्य कार्बन क्रेडिट के माध्यम से किसानों को पुरस्कृत करने पर लक्षित हो।
  - इसके अलावा, भारत को अपनी नीति में यह स्पष्ट रूप से प्रकट करना चाहिये कि विदेशी प्रदूषणकारी उद्योगों को बिक्री करते समय कार्बन क्रेडिट को किस प्रकार समायोजित किया जाएगा, ताकि दोहरी गणना से बचा जा सके।
- आहार संबंधी प्रथाओं में परिवर्तन लाना: विश्व में सर्वाधिक पशुधन आबादी (537 मिलियन) के साथ भारत को आहार संबंधी बेहतर प्रथाओं को विकसित करने पर ज़ोर देना चाहिये, ऐसे में उनकी उत्पादकता बढ़ाना महत्त्वपूर्ण है।
- जल-कुशल फसलों को बढ़ावा देना: पशुधन के अलावा, चावल की खेती (विशेष रूप से उत्तर-पश्चिम भारत के सिंचित इलाकों में) मीथेन उत्सर्जन हेतु काफी हद तक उत्तरदायी है।
  - जबकि चावल का बीजारोपण और वैकल्पिक 'वेट एंड ड्राई' विधि से चावल की खेती कार्बन फुटप्रिंट को कम कर सकती है, हालाँकि वास्तविक समाधान यह होगा कि चावल के बजाय मक्का या अन्य निम्न जल खपत वाली फसलों की खेती की ओर आगे बढ़ा जाए।
  - इसके साथ ही, चावल के बजाय मक्के की खेती के लिये किसानों को पुरस्कृत करने की एक प्रणाली इसे धान की तुलना में अधिक लाभदायक बनाएगी और यह सभी के लिये अनुकूल स्थिति होगी।
- जैव ईंधन को बढ़ावा देना: मक्का जैसी जल की बचत करने वाली फसलों से और साथ ही गैर-खाद्य चारे से इथेनॉल के उत्पादन को बढ़ावा दिया जा सकता है।
  - यह न केवल कच्चे तेल के आयात पर भारत की निर्भरता को कम करने में मदद करेगा बल्कि कार्बन फुटप्रिंट को भी कम करेगा।
- फर्टिगेशन (Fertigation) को बढ़ावा देना: बेहतर एवं कुशल उर्वरक उपयोग का एक विकल्प फर्टिगेशन (Injection of Fertilizers) को बढ़ावा देना और घुलनशील उर्वरकों को सब्सिडी प्रदान करना हो सकता है।
  - सरकार को 'फर्टिगेशन' के लिये ड्रिप पर प्रोत्साहन और सब्सिडी प्रदान करना चाहिये; चावल की खेती के बजाय मक्का या अन्य निम्न जल-गहन फसलों की ओर आगे बढ़ना चाहिये; और घुलनशील उर्वरकों पर दानेदार यूरिया के ही समान सब्सिडी प्रदान कर इसे बढ़ावा देना चाहिये।
- संवहनीय डेयरी अभ्यास: संवहनीय डेयरी अभ्यासों को सक्रियता से आगे बढ़ाने की आवश्यकता है, जिसमें निम्नलिखित को शामिल किया जा सकता है:
  - प्रौद्योगिकीय और सर्वोत्तम कृषि अभ्यासों के हस्तक्षेप और समाधानों के माध्यम से GHG उत्सर्जन में कमी करना।
  - 'सर्कुलर बायो-इकोनॉमी' (Circular Bio-Economy) में पशुधन को बेहतर ढंग से एकीकृत करके संसाधनों की मांग को कम करना।
    - पशु अपशिष्ट से पोषक तत्वों और ऊर्जा के पुनर्चक्रण और पुनर्प्राप्ति के माध्यम से इस लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है।
    - निम्न मूल्य और निम्न उत्सर्जन वाले बायोमास का उपयोग करने हेतु विभिन्न स्तरों पर फसलों और कृषि-उद्योगों के साथ पशुधन का एकीकरण।

निष्कर्ष

- इस बात को ध्यान में रखते हुए कि पर्यावरण को अब तक हो चुकी क्षति अपरिवर्तनीय है, कार्बन उत्सर्जन में भारी और तत्काल कटौती की आवश्यकता है।
- भारत एक कृषि पर निर्भर अर्थव्यवस्था होने के कारण न तो इस प्रथा को छोड़ सकता है और न ही इससे होने वाली क्षति की अनदेखी कर सकता है।
  - भारत को अपने राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान (NDCs) की पूर्ति के लिये बेहतर कार्बन-कुशल दृष्टिकोण की आवश्यकता है।

सामाजिक न्याय

वैश्विक खाद्य प्रणाली: दिशा और दशा

संदर्भ

बीते दिनों पहले और ऐतिहासिक संयुक्त राष्ट्र खाद्य प्रणाली शिखर सम्मेलन (United Nations Food Systems Summit-UNFSS) का आयोजन किया गया। विश्व खाद्य उत्पादन एवं उपभोग के तरीके और खाद्य दृष्टिकोण को बदलने तथा बढ़ती भुखमरी को दूर करने हेतु समाधान तलाशने और इसके प्रयासों को बढ़ावा देने हेतु वर्ष 2019 में संयुक्त राष्ट्र महासचिव द्वारा परिकल्पित एक गहन 'बॉटम-अप' प्रक्रिया के आलोक में इस शिखर सम्मेलन का आयोजन किया गया।

बड़े लक्ष्यों के संदर्भ में, सतत् विकास एजेंडा 2030 की प्राप्ति के लिये खाद्य प्रणाली रूपांतरण को आवश्यक माना जाता है। यह बेहद विवेकपूर्ण दृष्टिकोण है, क्योंकि 17 में से 11 सतत् विकास लक्ष्य (SDG) प्रत्यक्ष रूप से खाद्य प्रणाली से संबंधित हैं।

इस परिप्रेक्ष्य में, यह अनिवार्य है कि विकासशील देश भारतीय खाद्य सुरक्षा की सफलता से प्रेरित हों और सीख लें।

अन्य देशों के लिये रोल मॉडल

- खाद्य असुरक्षा के साथ भारत के प्रयास से सबक: खाद्य की भारी कमी से अधिशेष खाद्य उत्पादक तक की भारत की लंबी यात्रा एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के अन्य विकासशील देशों के लिये भूमि सुधार, सार्वजनिक निवेश, संस्थागत अवसंरचना, नए विनियामक ढाँचे, सार्वजनिक समर्थन और कृषि बाज़ारों एवं मूल्यों में हस्तक्षेप और कृषि अनुसंधान एवं विस्तार जैसे विषयों में प्रेरणादायी हो सकती है।
- कृषि का विविधीकरण: वर्ष 1991 से वर्ष 2015 के बीच की अवधि में भारत में कृषि का विविधीकरण किया गया और बागवानी, डेयरी, पशुपालन एवं मत्स्य क्षेत्रों पर अधिकाधिक ध्यान दिया गया।
  - ऐसे में भारत से पोषण स्वास्थ्य, खाद्य सुरक्षा एवं मानक, संवहनीयता, अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी की तैनाती और ऐसे अन्य विषयों के अनुभव लिये जा सकते हैं।
- खाद्य का समान वितरण: खाद्य में समानता के लिये भारत का सबसे बड़ा योगदान 'खाद्य सुरक्षा अधिनियम, 2013' है जो लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (TPDS), मिड-डे मील (MDM) और एकीकृत बाल विकास सेवाओं (ICDS) के लिये आधार प्रदान करता है।
  - वर्तमान में भारत का खाद्य सुरक्षा जाल सामूहिक रूप से एक बिलियन से अधिक लोगों तक पहुँच रखता है।
- खाद्य वितरण: खाद्य सुरक्षा जाल और समावेशन, सार्वजनिक खरीद तथा बफर स्टॉक नीति से जुड़े हुए हैं।
  - यह वर्ष 2008-2012 के वैश्विक खाद्य संकट और हाल ही में COVID-19 महामारी के दौरान स्पष्ट भी हो गया, जहाँ एक सुदृढ़ सार्वजनिक वितरण प्रणाली और खाद्यान्न बफर स्टॉक के साथ देश में कमज़ोर और हाशिये पर स्थित परिवारों को खाद्य संकट के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान किया जाना जारी रहा।

खाद्य सुरक्षा प्राप्ति के मार्ग की चुनौतियाँ

- जलवायु परिवर्तन और असंवहनीय कृषि: जलवायु परिवर्तन और भूमि तथा जल संसाधनों का असंधारणीय उपयोग वर्तमान में खाद्य प्रणालियों के समक्ष विद्यमान सबसे विकट चुनौतियाँ हैं।
  - जलवायु परिवर्तन पर अंतर-सरकारी पैनल (IPCC) की नवीनतम रिपोर्ट ने खतरे की घंटी बजाते हुए कार्रवाई की तात्कालिकता को उजागर किया है।
- आहार विविधता, पोषण और संबंधित स्वास्थ्य परिणाम चिंता के अन्य प्रमुख विषय हैं, क्योंकि चावल और गेहूँ पर अधिक ध्यान केंद्रित करने से कई विशिष्ट पोषण संबंधी चुनौतियाँ उत्पन्न हुई हैं।

नोट :

- भारत ने सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से आपूर्ति किये जाने वाले चावल को आयरन के साथ 'फोर्टीफाई' (Fortify) करने का निर्णय लिया है।
- अल्पपोषण और कुपोषण के दीर्घकालिक समाधान के लिये कृषि अनुसंधान संस्थानों ने अपेक्षाकृत बेहतर पोषण स्तर वाली कई फसलों किस्मों को जारी करने का निर्णय लिया है।

- अल्पपोषण की व्यापकता: यह विडंबना ही है कि सकल स्तर पर एक शुद्ध निर्यातक और खाद्य अधिशेष देश होने के बावजूद वैश्विक औसत की तुलना में भारत में अल्पपोषण की व्यापकता 50% अधिक है।
  - ऐसे में यह स्पष्ट है कि देश में अल्पपोषण की उच्च व्यापकता खाद्य की कमी या खाद्य की अनुपलब्धता के कारण है।
  - भारत सरकार और राज्य सरकारें इस विरोधाभासी परिदृश्य को लेकर गंभीर रूप से चिंतित हैं कि खाद्य अधिशेष की स्थिति के बावजूद देश की 15% आबादी अल्पपोषण की शिकार है।
    - वे कई पोषण हस्तक्षेपों के माध्यम से पोषण की निम्न स्थिति के अन्य संभावित कारणों को दूर करने का प्रयास कर रहे हैं। जैसा कि हाल ही में घोषणा की गई है, PDS के माध्यम से फोर्टीफाइड चावल की आपूर्ति और पोषण अभियान (Poshan Abhiyan) दो प्रमुख कदम होंगे, जिनके माध्यम से अल्पपोषण और कुपोषण की चुनौती को संबोधित किया जाएगा।
- खाद्य पदार्थों की बर्बादी को कम करना एक अन्य बड़ी चुनौती है और यह खाद्य आपूर्ति शृंखला की दक्षता से संबद्ध है।
  - भारत में 1 लाख करोड़ रुपए से अधिक की खाद्य पदार्थों की बर्बादी होती है।

आगे की राह

- संवहनीय दृष्टिकोण: न्यायसंगत आजीविका, खाद्य सुरक्षा और पोषण के लिये संवहनीय कृषि में निवेश, नवाचार और स्थायी समाधान के निर्माण हेतु आपसी सहयोग की आवश्यकता है।
  - इसके लिये निश्चित रूप से खाद्य प्रणाली की पुनर्कल्पना आवश्यक है, ताकि विकास एवं संवहनीयता के संतुलन, जलवायु परिवर्तन के शमन, स्वस्थ, सुरक्षित, गुणवत्तायुक्त और किफायती खाद्य की सुनिश्चितता, जैव विविधता बनाए रखने, प्रत्यास्थता में सुधार और छोटे भूमि-धारकों और युवाओं को एक आकर्षक आय और कार्य वातावरण प्रदान करने के लक्ष्य की दिशा में आगे बढ़ा जा सके।
- फसल विविधीकरण: जल के अधिक समान वितरण और संवहनीय एवं जलवायु-प्रत्यास्थी कृषि के लिये बाजरा, दलहन, तिलहन, बागवानी आदि की ओर फसल प्रारूप के विविधीकरण की आवश्यकता है।
- कृषि क्षेत्र में संस्थागत परिवर्तन: किसान उत्पादक संगठनों (FPOs) को छोटे धारकों हेतु इनपुट और आउटपुट के लिये बेहतर मूल्य प्राप्त करने में मदद करनी चाहिए।
  - ई-चौपाल (E-Choupal) छोटे किसानों को प्रौद्योगिकी के माध्यम से लाभान्वित करने का एक सफल उदाहरण है।
  - आय और पोषण की वृद्धि के लिये महिला सशक्तीकरण भी महत्त्वपूर्ण है।
    - महिला सहकारी समितियाँ और केरल के 'कुडुम्बश्री' (Kudumbashree) जैसे समूह इसमें मददगार होंगे।
- संवहनीय खाद्य प्रणालियाँ: आकलनों के अनुसार, खाद्य क्षेत्र विश्व के लगभग 30% ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन के लिये उत्तरदायी हैं।
  - उत्पादन, मूल्य शृंखला और उपभोग में संवहनीयता प्राप्त करनी होगी।
- गैर-कृषि क्षेत्र: संवहनीय खाद्य प्रणालियों के लिये गैर-कृषि क्षेत्र की भूमिका भी समान रूप से महत्त्वपूर्ण है। श्रम-प्रधान विनिर्माण और सेवा क्षेत्र कृषि क्षेत्र पर दबाव को कम कर सकते हैं, क्योंकि कृषि से होने वाली आय छोटे धारकों और अनौपचारिक श्रमिकों के लिये पर्याप्त नहीं है।
  - इसलिये, ग्रामीण सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों (MSMEs) और खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों को सशक्त बनाना भी दीर्घकालिक समाधान का एक अंग होगा।

निष्कर्ष

यह समझना महत्त्वपूर्ण है कि भूख और खाद्य असुरक्षा विश्व भर में संघर्ष और अस्थिरता के दो प्रमुख चालक हैं। 'फ़ूड इज़ पीस' (Food is peace) का नारा इस बात को प्रमुखता से उजागर करता है कि भुखमरी और संघर्ष एक-दूसरे को संपोषित करते हैं और खाद्य की सुनिश्चितता के बिना स्थायी शांति नहीं लाई जा सकती।

संयुक्त राष्ट्र विश्व खाद्य कार्यक्रम (UN-WFP) को वर्ष 2020 का नोबेल शांति पुरस्कार प्रदान किया जाना संघर्ष की समाप्ति और स्थिरता के निर्माण के लिये भुखमरी की समस्या को संबोधित किये जाने के महत्त्व को रेखांकित करता है। इस भावना को नोबेल समिति ने अपने इस उद्धरण से भली-भाँति अभिव्यक्त किया है कि —"जब तक हमारे पास चिकित्सकीय टीका उपलब्ध नहीं होता, तब तक अराजकता के विरूद्ध भोजन की उपलब्धता ही हमारा सर्वोत्कृष्ट टीका है।" (Until the day we have a medical vaccine, food is the best vaccine against chaos.)

दृष्टि The Vision